श्री विद्या भवन संस्कृत ग्रन्थमाला २७

॥ श्रीः ॥

संस्कृत पाठमाला

द्वितीय पुस्तक

लेखकः—
महापण्डित राहुलसांकृत्यायन

चौखम्बा विद्या भवन, बनारस-१

सं० २०१३] [ई० १९५६

प्रकाशक—
चौखम्बा विद्या भवन
चौक, बनारस-१

The Chowkhamba Vidya Bhawan
Chowk, Banaras.
(INDIA)
1956

मूल्य—

प्रथम पुस्तक ॥)	द्वितीय पुस्तक ।।।)	तृतीय पुस्तक ।।।)
चतुर्थ पुस्तक ।।।)	पञ्चम पुस्तक ।।।=)	१-५ पुस्तक २॥=)

मुद्रक—
विद्या विलास प्रेस,
बनारस-१

दो शब्द

३० वर्ष पहिले १९२९ ई० में मैं बौद्धधर्मके अध्ययनके लिये सिंहल (श्री लङ्का) गया था। उस समय विद्यालंकार परिवेण (विहार) में रहते वहाँके भिक्षुओंको संस्कृत पढ़ाने लगा। सभी जगहोंके विद्यार्थियोंकी तरह वहाँके विद्यार्थी भी संस्कृत भाषासे बहुत डरते थे। उन्हें सुगम रास्तेसे ले जानेके लिये ये पाँच पोथियाँ लिखी गईं, जिनमें पाँचवींमें छन्द और अलंकार भी रख दिये गये। विद्यार्थियोंको ये बहुत सुगम प्रतीत हुईं। इन्हें सिंहल भाषा और सिंहल लिपिमें उसी समय छापा गया। अब तक इनके कितने ही संस्करण छप चुके हैं। मित्रोंने इन्हें हिन्दीके साथ छापनेके लिये कहा। पूर्ववत् छापना अच्छा न समझ मैंने बहुतसे परिवर्तन कर दिये। कितने ही नये उद्धरण दिये, और इनका रूप पाठमालाका बना दिया।

पाठक पहिली बार व्याकरणवाले भागको छोड़ सकते हैं। हाँ, पाठको कई बार दुहराना चाहिये।

चौखम्बा संस्कृत ग्रन्थमाला एवं चौखम्बा विद्याभवनके स्वामी तथा संस्कृत ग्रन्थोंके सबसे बड़े उद्धारक और प्रचारक बाबू जयकृष्णदासजी गुप्तने बड़ी प्रसन्नता और तत्परतासे इनके प्रकाशनका भार अपने ऊपर लिया। यदि संस्कृतके सार्वजनीन प्रसारमें इनसे सहायता मिली, तो मैं अपने प्रयत्नको सफल समझूंगा।

मसूरी १३-२-५६ राहुल सांकृत्यायन

द्वितीय पुस्तक

प्रथमः पाठः

पुरा कोसलजनपदे रामो[२२] नाम राजकुमारोऽ[१६] भवत्, विमातुः दुर्विचारेण पित्रा प्रवासितः सः वनं गतः। तत्र कन्द-मूलफलैः निवसतः तस्य अनेकानि वत्सराणि गतानि। अथ लङ्केश्वरो रावणो रामस्य भार्यायाः सीतायाः रूपसौन्दर्यं श्रुत्वा एकाकिनीं तां हृत्वा लंकां अनयत्।

[प्राचीनकालमें (जंबूद्वीपके) कोसलदेशमें राम नामक राजकुमार हुआ। सौतेली माँके दुर्विचारसे पिता द्वारा प्रवासित हो वह वन गया। वहाँ कन्दमूलफलसे निवास (आहार) करते उसके अनेक वर्ष बीते। इसी बीच लङ्केश्वर रावण रामकी पत्नी सीताके रूपसौन्दर्यको सुनकर उसे हरके लङ्का ले गया।]

विमाता (सौतेली माँ) दुर्विचारः (कुविचार) प्रवासितः (देशनिकाला) एकाकिनी (अकेली) अनयत् (ले गया) हृत्वा (हर कर)

इकारान्त नपुंसक लिंग वारि (पानी) शब्द—

प्रथमा	वारि	वारिणी	वारीणि
संबोधन	हे वारि, वारे	,,	,,
द्वितीया	वारि	,,	,,

तृतीया	वारिणा	वारिभ्यां	वारिभिः
चतुर्थी	वारिणे	,,	वारिभ्यः
पंचमी	वारिणः	,,	,,
षष्ठी	,,	वारिणोः	वारीणाम्
सप्तमी	वारिणि	,,	वारिषु



द्वितीयः पाठः

ततो भ्रात्रा लक्ष्मणेन सह सीतामन्विष्यन् रामो दक्षिणापथे तस्या वार्तां श्रुतवान्। अथ वानरराजेण सुग्रीवेण मैत्रीं कृत्वा तस्य साहाय्येन समुद्रमवतीर्य लङ्कां गत्वा रावणेन सह युद्धं अकरोत्। तत्र रावणं सपुत्रसेनं हत्वा विभीषणं राज्ये संस्थाप्य सीतया लक्ष्मणेन च सह कोसलेषु साकेतं प्रत्यगमत्।

[तब भाई लक्ष्मणके साथ सीताको ढूँढ़ते हुए रामने दक्षिणापथमें उसका समाचार सुना। तब वानरराज सुग्रीवसे मैत्री करके उसकी सहायतासे समुद्र पारकर लङ्कामें जा रावणके साथ युद्ध किया। और वहाँ पुत्रों और सेना सहित रावणको मार विभीषणको राज्यपर रख सीता और लक्ष्मणके साथ कोसलमें साकेत लौट आया।]

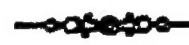
अन्विष्यन् (ढूँढ़ते) श्रुतवान् (सुना) मैत्री (दोस्ती) साहाय्यं (सहायता) अवतीर्य (उतरकर, पारकर) ततः (तब)

दक्षिणापथः (दक्षिण भारत) संस्थाप्य (रख कर) साकेतः (अयोध्या)

इकारान्त नपुंसक दधि (दही) शब्द—

प्रथमा	दधि	दधिनी	दधीनि
संबोधन	हे दधि, दधे	,,	,,
द्वितीया	दधि	,,	,,
तृतीया	दध्ना	दधिभ्यां	दधिभिः
चतुर्थी	दध्ने	,,	दधिभ्यः
पंचमी	दध्नः	,,	,,
षष्ठी	,,	दध्नोः	दध्नाम्
सप्तमी	दध्नि, दधनि	,,	दधिषु

ऐसे ही अस्थि (हड्डी) सक्थि (जाँघ) अक्षि (आँख)



तृतीयः पाठः

उत्पलं प्रतिभाति सुन्दरं — कमल सुंदर दीखता (है)
वारिणि प्रददाति सौरभम् — जलमें सुगंध देता है।
स्त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्य वीर्यं — स्त्री का चरित्र पुरुष का वीर्य
पातो हि लोके जनसर्व-सौख्यम् — संसार में जन के सभी सुख की रक्षा करते हैं।
स्त्रीणामनादरो यत्र श्रियो वासोऽपि तत्र न — स्त्रीका जहाँ अनादर, वहाँ लक्ष्मीका वास भी नहीं।

श्रीहर्षो निपुणः कविः परिषदप्येषा गुणग्राहिणी ।
लोके हारि च वत्सराजचरितं नाट्ये च दक्षा वयम् ।

[श्रीहर्ष निपुण कवि, यह सभा भी गुणग्राहिणी (है) । संसारमें वत्सराज (उदयन) का चरित (मनो) हर और हम नाट्यमें दक्ष (हैं)] ।

द्वीपादन्यस्मादपि मध्यादपि जलनिधेर्[२७] दिशोऽप्यन्तात् ।
आनीय झटिति घटयति विधिरभिमतमभिमुखीभूतः ।

[विधि अनुकूल हो तो अन्य द्वीप, सागरके मध्य दिशाके भी अन्तसे ला कर झट इष्टको घटित कर देता है] ।

उत्पलं (कमल) **प्रतिभाति** (दीखता है) **सौरभं** (सुगन्ध) **सौख्यं** (सुख) **वीर्यं** (पराक्रम) **पातः** (रक्षा करते, द्विवचन) **हारि** (मनोहर) **दक्षः** (चतुर) **परिषद्** (सभा) **झटिति** (झट) **अभिमुखीभूतः** (अनुकूल) **विधिः** (भाग्य)

ईकारान्त स्त्रीलिङ्ग स्त्री शब्द—

प्रथमा	स्त्री	स्त्रियौ	स्त्रियः
संबोधन	हे स्त्रि	"	"
द्वितीया	स्त्रियं, स्त्रीं	स्त्रियौ	स्त्रियः, स्त्रीः
तृतीया	स्त्रिया	स्त्रीभ्यां	स्त्रीभिः
चतुर्थी	स्त्रियै	"	स्त्रीभ्यः
पंचमी	स्त्रियाः	"	"
षष्ठी	"	स्त्रियोः	स्त्रीणां
सप्तमी	स्त्रियां	"	स्त्रीषु

ऐसे ही श्री (लक्ष्मी) धी (बुद्धि)

चतुर्थः पाठः

अभवत् पुरा चिन्तामणिर्नाम राजा। तस्य तनयः कन्दर्प-केतुर्नाम। स कदाचित् अवसन्नायां निशायां अतिमनोहरां एकां कन्यां अपश्यत् स्वप्ने।

अथ सः मित्रेण मकरन्देन सह बहुदूरं मार्गं गत्वा रेवया शोभितं विन्ध्यं नाम गिरिं उपेत्य तत्र कस्यचन जम्बूतरोः छायायां विश्रामं अकरोत्।

अत्रान्तरे सूर्यः[२३] अस्तं अगच्छत्। ततः कन्दर्पकेतुः मकरन्दानीतैः फलैः आहारं अकरोत्।

[पहिले चिन्तामणि नामक राजा हुआ था। उसके पुत्रका नाम कन्दर्पकेतु (था)। उसने कभी रातकी समाप्तिमें स्वप्नमें एक अतिमनोहर कन्या देखी।

तब उसने मित्र मकरन्दके साथ बहुत दूर मार्ग जा रेवा (नर्मदा नदी) से शोभित विन्ध्याचलमें पहुँच वहाँ किसी जामुनवृक्ष की छाया में विश्राम किया।

इसी बीच सूर्य अस्त हो गये। तब कन्दर्पकेतुने मकरन्द द्वारा लाये फलसे आहार किया।]

तनयः (पुत्र) अवसन्ना (समाप्त) निशा (रात) रेवा (नर्मदा नदी) उपेत्य (आ कर) कस्यचन (किसीके) तरुः (वृक्ष) अन्तरे (बीच) अस्त (डूबा)

तकारान्त पुंल्लिंग मरुत् (हवा) शब्द—

प्रथमा	मरुत्	मरुतौ	मरुतः
संबोधन	हे मरुत्	,,	,,
द्वितीया	मरुतं	,,	,,
तृतीया	मरुता	मरुद्भ्यां	मरुद्भिः
चतुर्थी	मरुते	,,	मरुद्भ्यः
पंचमी	मरुतः	,,	,,
षष्ठी	,,	मरुतोः	मरुतां
सप्तमी	मरुति	,,	मरुत्सु

ऐसे ही भूभृत् (राजा) हरित् (हरा) दधत् (पकड़े)

पञ्चमः पाठः

अथ याममात्रावशिष्टायां यामवत्यां जम्बूतरुशिखरे मिथः कलहायमानयोः शुकसारिकयोः कलकलं श्रुत्वा 'आकर्णयाव तावत् अनयोः आलापं' इति दत्तावधानौ मकरन्द-कन्दर्पकेतू शारिकयाऽनुबद्धमानेन शुकेन कथ्यमानां कथां आकर्णयताम् ।

अस्ति पुष्पपुरं नाम नगरं, यस्य परिसरे भगवती भागीरथी प्रवहति । तत्र महावीरो धर्मात्मा शृङ्गारशेखरो नाम राजा प्रतिवसति । तस्य महिषी अनङ्गवती नाम । तयोश्च मध्यमे वयसि त्रिभुवनमनोज्ञाकृतिः तनयाऽभवत् वासवदत्ता नाम ।

[तब रातके पहर भर रह जाने पर जामुनके पेड़के शिखर पर, झगड़ते तोता-मैनाके कलहको सुन कर 'इनकी बात (हम दोनों)

सुने' यह (सोच) ध्यान दे मकरन्द और कन्दर्पकेतुने मैनासे बाधित तोता द्वारा कही जाती कथा सुनी।

है पुष्पपुर (पटना) नाम नगर, जिसके पासमें भगवती गंगा बहती है। वहाँ बड़ा वीर धर्मात्मा शृङ्गारशेखर नामक राजा रहता है। उसकी रानी अनङ्गवती नामक है। उन दोनोंकी मझली उमरमें तीनों लोकमें मनोहर वासवदत्ता नामक पुत्री हुई।]

यामः (प्रहर, चार घंटेका) **यामवती** (रात) **मिथः** (आपस में) **कलहायमानः** (लड़ते झगड़ते) **शारिका** (मैना) **कलकलः** (आवाज) **आकर्णयतां** (दोनोंने सुना) **दत्तावधानः** (सावधान हो) **अनुबध्यमानः** (बाधित हो) **कथ्यमानः** (कहा जाता) **परिसरे** (समीप) **महिषी** (रानी) **वयस्** (आयु) **त्रिभुवनमनोज्ञा** (तीनों लोक में सुन्दर) **मध्यमः** (बिचला)

समास—

संस्कृतमें समास निम्न प्रकारके मिलते हैं—

१. **तत्पुरुष**—इसके प्रथमा से सप्तमी और अभावात्मक (न) आठ भेद हैं—

प्रथमा तत्पुरुष—**अर्धं रुप्यकस्य = अर्धरुप्यकम्** (रुपयेका आधा)

द्वितीया०—**ग्रामं गतः = ग्रामगतः** (गाँवको गया)

तृतीया०—**बुद्धेन दत्तः = बुद्धदत्तः** (बुद्ध द्वारा दिया)

चतुर्थी०—**गुरवे दक्षिणा = गुरुदक्षिणा** (गुरुके लिये दक्षिणा)

पंचमी०—**सिंहाद् भयं = सिंहभयम्** (सिंहसे डर)

षष्ठी०—**बुद्धस्य धर्मः = बुद्धधर्मः** (बुद्धका धर्म)

सप्तमी०—जले मग्नः = जलमग्नः (जलमें मग्न)

नञ् समास—न ब्राह्मणः = अब्राह्मणः (नहीं ब्राह्मण)

२. कर्मधारय समास—विशेषण विशेष्यवाला समास—

कृष्णश्च असौ सर्पश्च = कृष्णसर्पः (काला जो साँप है, सो कृष्णसर्प)

रक्ता च लता च = रक्तलता (लाल लता)

मेघ इव श्यामः = मेघश्यामः (मेघ जैसा श्याम)

चन्द्रवत् मुखं = चन्द्रमुखं (चाँद जैसा मुँह)

३. बहुव्रीहि समास—जिसमें उत्तरवाला पद प्रधान होता है—

निर्जितो मारो येन सः = निर्जितमारः (मारको जिसने जीत लिया, वह निर्जितमार)

पीतं अम्बरं यस्य सः = पीताम्बरः (पीला जिसका कपड़ा, वह)

सुन्दरं अङ्गं यस्याः सा = सुन्दराङ्गी (सुन्दर है अंग जिसका)

४. द्वंद्व समास—च (और) के लिये आता है—

मेधानन्दश्च सुमनतिष्यश्च = मेधानन्दसुमनतिष्यौ (मेधानन्द और सुमनतिष्य)

१. नोट—त (तत्पुरुष), क (कर्मधारय), ब (बहुव्रीहि) ये संकेत आगे आयेंगे ।



षष्ठः पाठः

सा परिणामं गच्छति यौवनेऽ[१५] पि परिणयपराङ्मुखी (त) अतिष्ठत् । अथै[१६]कदा वसन्तकाले वासवदत्ता-सखीजनात् विदित-सुताभिप्रायः (ब) भृङ्गारशेखरः स्वसुतायाः स्वयंवरार्थं अशेष-धरणितलस्थानां राजपुत्राणां मेलनं अकरोत् ।

ततः पुष्पालंकृतं मञ्चं आरुह्य वासवदत्ता एतान् एकैकशः समवलोक्य विरक्तहृदया (ब) मञ्चात् अवातरत् । अथ तस्यामेव रात्रौ सा स्वप्ने त्रिभुवनरमणीयाकृतिं कञ्चित् तरुणं अपश्यत् । 'स चिन्तामणेः नृपस्य तनयः कन्दर्पकेतुः' इति स्वप्ने एव तन्नामादिकं आकर्णयत् ।

[वह (वासवदत्ता) बीतते जाते यौवनमें विवाहसे विमुख रही। तब एक बार वासवदत्ताकी सखियोंसे सुताके अभिप्रायको जान श्रृङ्गारशेखरने अपनी कन्याके स्वयंवरार्थ सारी पृथिवीके राजपुत्रोंका सम्मेलन कराया ।

तब पुष्पोंसे अलंकृत मंच पर चढ़ कर वासवदत्ता उनमेंसे एक एकको देख हृदयमें विरक्त हो मंचसे उतरी । फिर, उसी रात उसने स्वप्नमें तीनों लोकमें सुन्दर शरीर वाले किसी तरुणको देखा। 'वह चिन्तामणि राजाका पुत्र कन्दर्पकेतु (है)' यह उसका नाम आदि स्वप्न ही में सुना]

परिणामः (समाप्ति) **परिणयपराङ्मुखी** (ब्याहसे पराङ्मुख) **अशेषः** (सब) **क्षणेन** (क्षण भर में) **विरक्तहृदया** (अप्रसन्न हो गया है हृदय जिसका)

इकारान्त पुँल्लिङ्ग पति शब्द—

प्रथमा	पतिः	पती	पतयः
संबोधन	हे पते	,,	,,
द्वितीया	पतिं	,,	पतीन्
तृतीया	पत्या	पतिभ्यां	पतिभिः
चतुर्थी	पत्यै	,,	पतिभ्यः
पंचमी	पत्युः	,,	,,
षष्ठी	,,	पत्योः	पतीनां
सप्तमी	पत्यौ	,,	पतिषु

सप्तमः पाठः

प्रबुद्धा च सा तस्य रूपलावण्यं कान्तिं च मुहुर्मुहुर्भावयन्ती मदनदावाग्निशिखाकवलिता कन्दर्पकेतुं हृदये विलिखितं इव कीलितं इव मन्यमाना उन्मत्ता इव बधिरेव मूका इव अतिष्ठत्।

'अथ तस्याः तमालिका नाम शारिका तत्सखीभिः सम्मंत्र्य कन्दर्पकेतुभावं आकलयितुं प्रेषिता सापि मया सार्धं आगता अत्रैव तरोः अधस्तात् तिष्ठति' इत्युक्त्वा शुको व्यरमत्।

[और जागने पर वह उसके रूपलावण्य और कान्ति को बार-बार भावना करती मदनकी वनाग्निकी शिखाका ग्रास होती हृदयमें (उसकी कान्तिको) खुदी सी कीलित सी मानती उन्मत्त सी बहिरी सी गूँगी सी हो गई।

'फिर उसकी सखियोंने उसकी तमालिका नामक मैनाको सलाह करके कन्दर्पकेतुके भावको जाननेके लिये भेजा। वह भी मेरे साथ आकर यहीं तरुके नीचे खड़ी है।' यह कह कर तोता चुप हो गया]

प्रबुद्धा (जगी) लावण्यं (लुनाई) कान्तिः (कमनीयता) मुहुर्मुहुः (बारबार) भावयन्ती (भावना करती) मदनः (कामदेव) दावाग्निः (जंगल की आग) शिखा (लौ) उन्मत्ता (पगली) बधिरा (बहरी) मन्यमाना (मानती) मूका (गूंगी) आकलयितुं (जानने को) अधस्तात् (नीचे) व्यरमत् (विराम किया) सार्धं (साथ) शुकः (तोता) प्रेषिता (भेजी)

उकारान्त स्त्रीलिंग धेनु (गाय) शब्द—

प्रथमा	धेनुः	धेनू	धेनवः
सम्बोधन	हे धेनो	"	"
द्वितीया	धेनुं	"	धेनूः
तृतीया	धेन्वा	धेनुभ्यां	धेनुभिः
चतुर्थी	धेन्वै	"	धेनुभ्यः
पंचमी	धेन्वाः	"	"
षष्ठी	"	धेन्वोः	धेनूनां
सप्तमी	धेनौ, धेन्वां	"	धेनुषु

अष्टमः पाठः

अथ तत् श्रुत्वा सहर्षं समुत्थाय मकरन्दः तां तमालिकां आहूय विदितवृत्तान्तां अकरोत्। सा तस्मै कृतप्रणामा तां पत्रिकां उपानयत्। अथ मकरन्दः तां आदाय पत्रिकां विस्रस्य स्वयं एव अवाचयत्—

"प्रत्यक्षदृष्टभावाऽप्यस्थिरहृदया हि कामिनी भवति।
स्वप्नानुभूतभावा दृढयति न प्रत्ययं युवतिः।"

तत् श्रुत्वा कन्दर्पकेतुः अमृतार्णव(त)निमग्न इव मन्दं उत्थाय तमालिकां आलिङ्गत। तं च दिवसं तत्रैव वासवदत्तावृत्तान्तं पृच्छन् अतिवाह्य, तस्मात् प्रदेशात् अचलत् समित्रः कन्दर्पकेतुः। अत्रान्तरे भगवान् अपि मरोचिमाली वृत्तान्तं इमं कथयितुं इव मध्यमं लोकं अवातरत्।

[फिर, वह सुन हर्षके साथ उठ कर मकरन्दने उस तमालिकाको बुलाकर वृत्तान्त बतलाया। उसने प्रणाम करके उस पत्रिकाको ला पास रक्खा। फिर, मकरन्दने उस पत्रिकाको ले स्वयं ही बांचा—

"प्रत्यक्ष देखा होने पर भी कामिनी अस्थिर हृदयवाली होती है।
स्वप्नमें अनुभूत किये युवति विश्वास दृढ़ नहीं कर पाती।"

वह सुन कर कन्दर्पकेतु ने अमृतके समुद्रमें निमग्न जैसे धीरेसे उठ कर तमालिकाको आलिङ्गन किया और उस दिन को वहीं वासवदत्ताके वृत्तान्तको पूछते बिता कर मित्रसहित कन्दर्पकेतु उस

स्थानसे चला। इसी बीच भगवान् सूर्य इस वृत्तान्तको मानो कहने के लिये बिचले लोकमें उतर गये]।

उत्थाय (उठ कर) आहूय (पुकार कर) विदितवृत्तान्ता (वृत्तान्त-जानी) विस्रस्य (खोल कर) अवाचयत् (पढ़ा) मन्दं (धीरे) आलिंगत (आलिंगन किया) अतिवाह्य (बिता कर) स्वप्नानुभूतः (स्वप्नमें देखा) प्रत्ययः (विश्वास) युवतिः (तरुणी) प्रत्यक्षं (आंख देखा)

सन्धिः—

२८. त् + ल = ल् + ल, तत् + लयः = तल्लयः, तत् + लीनं = तल्लीनम्।

उकारान्त नपुंसकलिंग मधु शब्द

प्रथमा	मधु	मधुनी	मधूनि
संबोधन	हे माधो, मधु	,,	,,
द्वितीया	मधु	,,	,,
तृतीया	मधुना	मधुभ्यां	मधुभिः
चतुर्थी	मधुने	,,	मधुभ्यः
पंचमी	मधुनः	,,	,,
षष्ठी	मधुनः	मधुनोः	मधूनां
सप्तमी	मधुनि	,,	मधुषु

ऐसे ही वस्तु (चीज) जतु (लाख) श्मश्रु (मोंछ)

नवमः पाठः

ततः क्रमेण च तापहारिणि प्रवहति पवने कन्दर्पकेतुः तमालिका-मकरन्द-सहायः प्रणयकथां शृण्वन् वासवदत्ताभवनं प्रविश्य तत्र अलङ्कारप्रसाधितां वासवदत्तां अपश्यत्। अथ तां विस्फारितेन नेत्रेण पिबतः कन्दर्पकेतोः आहरत् चेतनां मूर्छा। तमनुपश्यन्ती वासवदत्तापि अमूर्छत्। अथ मकरन्द-सखीजन-प्रयत्नात् लब्धसंज्ञो वासवदत्ता-कन्दर्पकेतू एकासनं न्यषीदताम्।

[तब, क्रमशः ताप हरनेवाले हवाके बहते (समय) में तमालिका और मकरन्दको साथ लिये कन्दर्प-केतुने प्रेमकी कथायें सुनते वासवदत्ताके भवनमें प्रवेश कर वहाँ भूषणोंसे सजी वासवदत्ताको देखा। तब उसे फैले नेत्रों द्वारा पीते हुये कन्दर्पकेतुकी चेतनाको मूर्छाने हर लिया। फिर उसे देखती वासवदत्ता भी मूर्छित हो गई। बादमें मकरन्द और सखियोंके प्रयत्नसे होशमें आ वासवदत्ता और कन्दर्पकेतु एक आसनपर बैठे।]

तापहारी (तापहरने वाला) पवने प्रवहति (हवाके चलने पर) सहायः (मित्र) प्रणयः (प्रेम) शृण्वन् (सुनते) पिबन् (पीते हुये) प्रसाधनं (सज्जा) प्रविश्य (प्रवेश कर) विस्फारितं (फाड़ा) अनुपश्यन्ती (बादमें देखती)

२. सन्धि—

२९. वर्गके तृतीय चतुर्थ वर्ण + वर्गके प्रथम चार वर्ण = तृतीय, चतुर्थ वर्ण + ०, मरुत् + भ्यां = मरुद्० वाक् + भिः = वाग्-भिः।

नकारान्त पुंल्लिंग पथिन् (मार्ग) शब्द—

प्रथमा	पन्थाः	पन्थानौ	पन्थानः
संबोधन	हे पन्थाः	,,	,,
द्वितीया	पन्थानं	,,	पथः
तृतीया	पथा	पथिभ्यां	पथिभिः
चतुर्थी	पथे	,,	पथिभ्यः
पंचमी	पथः	,,	,,
षष्ठी	,,	पथोः	पथां
सप्तमी	पथि	,,	पथिषु



दशमः पाठः

अस्ति गौतमस्य महर्षेः तपोवने महातापसो नाम मुनिः। तेन एकदा काकेन गृहीतो मूषिकपोतको दृष्टः। ततो दयालुना तेन मुनिना मोचितः स धान्यैः वर्धितः। अथ बिडालः तं मूषिकं खादितुं धावति। तं अवलोक्य मूषिकः मुनेः क्रोडे प्रविशति। ततो मुनिः अवदत्—'मूषिक, त्वं कुक्कुरो भव'। ततः बिडालः कुक्कुरं दृष्ट्वा पलायते।

[है महर्षि गौतमके तपोवनमें महातापस नामक मुनि। उसने एक बार कौये से पकड़ा गया चूहेका बच्चा देखा। तब दयालु मुनिने छुड़ा कर उसे अनाजसे पोसा। तब बिल्ला उस चूहे को खाने दौड़ा। उसे देख चूहा मुनिकी गोदमें घुस गया। तब

मुनिने कहा—'चूहे, तू कुक्कुर हो जा 'तब कुक्कुरको देख कर बिल्ला भागा ।)

पोतकः (बच्चा) **बिडालः** (बिल्ला) **क्रोडं** (गोद)

सन्धिः—

३० (अनुस्वार) + वर्गके प्रथम चार वर्ण, य, व, र, ल = वर्गका अन्तिम वर्ण, ० मार्गं + गच्छति = मार्गङ्गच्छति, सं + चरति = सञ्चरति ।

प्रथमा	सखा	सखायौ	सखायः
सम्बोधन	हे सखे	,,	,,
द्वितीया	सखायं	,,	सखीन्
तृतीया	सख्या	सखिभ्यां	सखिभिः

शेष रूप पति जैसे ।

एकादशः पाठः

अस्ति गौतमारण्ये कश्चिद् ब्राह्मणः सं[२३] यागार्थं ग्रामान्तराद् एकं छागं क्रीत्वा स्कन्धे स्थापयित्वा गच्छति । त्रिभिर्[२७] धूर्तैर् विचारितं— 'अयं छागः केनापि उपायेन गृहीतव्यः' । ततः त्रयाणां वृक्षाणां तले गव्यूतिं गव्यूतिं अन्तरेण ते स्थिताः । तत्र प्रथमो धूर्तः ब्राह्मणं दृष्ट्वा अपृच्छत्— 'भो ब्राह्मण, किमिति कुक्कुरं स्कन्धेन वहसि ?'

ब्राह्मणो[१६]ऽवदत्—'नायं कुक्कुरः, अयं तु छागः' ।

अथ अग्रेऽन्येन धूर्तेन उक्तं–'भोः, किमर्थं कुकुरं नयसि ?'

'न कुकुरः, यागार्थं छाग एषः।'

'किं कथयामि, अहमेव अन्धः, तर्हि।'

तत् श्रुत्वा ब्राह्मणः छागं भूमौ निधाय सम्यक् निरीक्ष्य 'छाग एव' इति पुनः स्कन्धे कृत्वा चल-चित्तः (ब) अचलत्।

ततः तृतीयेन धूर्तेन साश्चर्यं उक्तं 'भो भो महाब्राह्मण, किमर्थं कुकुरं स्कन्धे वहसि ?' एतत् श्रुत्वा ब्राह्मणेन चिन्तितं' नूनं एष कुक्कुर एव, दास्याः पुत्रेण अजपालेन वंचितोऽहं, अन्यथा कथं एते त्रयोऽपि पुरुषा एवं कथयन्ति ?' इति स तं छागं तत्रैव अत्यजत्।

[गौतमारण्यमें कोई ब्राह्मण था। वह दूसरे गांवसे यज्ञके लिये बकरा खरीद कर कंधेपर रखे जा रहा था। तीन धूर्तोंने सोचा–'इस बकरेको किसी उपायसे लेना चाहिये'। तब तीनों वृक्षोंके नीचे दो–दो कोस के अन्तरसे खड़े हो गये। तब पहिले धूर्तने ब्राह्मणको देख कर कहा–'भो ब्राह्मण, किसलिये कुक्कुर कंधेपर ढो रहे हो ?'

ब्राह्मणने कहा–'कुक्कुर नहीं, यह तो बकरा (है)।'

फिर आगे दूसरे धूर्तने कहा–'हे, क्यों कुक्कुर ले जा रहे हो ?'

'कुक्कुर नहीं, यज्ञके लिये छाग (है) यह।'

'क्या कहूँ, तो मैं ही अन्धा (हूँ)'

सो सुन ब्राह्मण बकरेको भूमि पर रख भली प्रकार देख-भाल कर 'छाग ही (है)' यह (सोच) फिर कन्धेपर करके संदेह में पड़ा चला।

तब, तीसरे धूर्तने अचरजके साथ कहा—'हे हे महाब्राह्मण, क्यों कुक्कुरको कंधे पर ले जा रहे हो ?'

यह सुन ब्राह्मणने सोचा—'अवश्य यह कुक्कुर ही है। दासीके बच्चे उस बकरीवाले ने मुझे धोखा दिया, नहीं तो क्यों ये तीनों पुरुष ऐसा कहते हैं ?' यह (विचार कर) उसने उस बकरेको वहीं छोड़ दिया।]

गौतमारण्यं (नाम, संभवतः सारन जिलेका गोदना) **छागः** (बकरा) **क्रीत्वा** (खरीद कर) **स्कन्धः** (कन्धा) **धूर्तः** (ठग) **गव्यूतिः** (दो कोस) **अन्तरेण** (फासिले से) **किमिति** (काहे) **निधाय** (रख कर) **चलचित्तः** (चंचल चित्त वाला) **अचलत्** (चला)

सन्धिः—

३१. र, ष + न = ० + ण, नरे + न = नरेण,

वृक्षा + नां = वृक्षाणम् ।

ऊकारान्त स्त्रीलिंग चमू (सेना) शब्द—

प्रथमा	चमू	चम्वौ	चम्वः
संबोधन	हे चमु	,,	,,
द्वितीया	चमूम्	,,	चमूः
तृतीया	चम्वा	चमूभ्यां	चमूभिः
चतुर्थी	चम्वै	,,	चमूभ्यः
पंचमी	चम्वाः	,,	,,
षष्ठी	,,	चम्वोः	चमूनाम्
सप्तमी	चम्वाम्	,,	चमूषु

ऐसे ही वधू (बहू), कर्कन्धू (बेर)।

द्वादशः पाठः

जम्बूद्वीपाद् आगतः शुकोऽवदत्—'देव, सिंहलद्वीपे सारसो राजा सम्प्रति जम्बूद्वीपं आक्रम्य तिष्ठति।

राजा समाकुलो वदति—'किं, किम् ?'

शुकः पुनः तदेव कथयति।

राजा—'कथं सारसो मां न गणयित्वा अत्रागतः ? अहं इदानीमेव गत्वा तेन सह युद्ध्यामि। मंत्रिणः शीघ्रं युद्धार्थं सज्जा भवन्तु, गजाः अश्वाः रथाः पदातयश्च नगराद् बहिः निस्सरन्तु।'

[भारतसे आये तोते ने कहा—'महाराज, सिंहलद्वीप का राजा सारस आजकल भारतपर आक्रमण कर रहा है।

राजाने आकुल हो कर कहा—क्या, क्या ?'

तोतेने फिर वही कहा।

राजा बोला—'क्या सारस मुझे कुछ न समझ यहाँ आया (है) ? मैं अभी जाकर उसके साथ युद्ध करता हूँ। मंत्री जल्दी युद्धके लिये तैयार हों। हाथी, घोड़े, रथ और पैदल नगरसे बाहर निकलें']

सज्जाः (तैयार) न गणयित्वा (न समझ) पदातिः (पैदल सैनिक)

सन्धिः—

३२. ० + वर्गके प्रथम दो अक्षर, श, ष, स = श, ष, स् + ०, ग्रन्थः + तस्य = ग्रन्थस्तस्य, कृष्णः + शकटे = कृष्णश्शकटे।

तकारान्त नपुंसकलिंग जगत् शब्द—

प्रथमा, द्वि०	जगत्	जगती	जगन्ति
संबोधन	"	"	"

शेष रूप मरुत् की तरह।

कति (कितना) शब्द सदा बहुवचन ही होता है। इसके रूप हैं—(१) कति, (२) कति, (३) कतिभिः, (४) कतिभ्यः, (५) कतिभ्यः (६) कतीनाम्, (७) कतिषु।

कति से ही **यति** (जितना) के रूप भी होते हैं।



त्रयोदशः पाठः

अस्ति उज्जयिनीमार्गे न्यग्रोधतरुः। तत्र हंस-काकौ निवसतः। कदाचित् ग्रीष्मकाले परिश्रान्तः कश्चित् पथिकः तत्र तरुतले सुप्तः। अथ क्षणानन्तरे तस्य मुखात् वृक्षच्छायाऽपगता। सूर्यमुखेन तस्य मुखं तप्यमानं विलोक्य वृक्षस्थितेन हंसेन पक्षौ प्रसार्य तन्मुखे छाया कृता। ततः दुष्टस्वभावेतया काकः तस्य मुखे पुरीषोत्सर्गं कृत्वा पलायितः। पथिकः उत्थाय तस्य कारणं अन्विष्यन् ऊर्ध्वं अपश्यत्, हंसं च दृष्ट्वा बाणेन तं अमारयत्।

[है उज्जैनके रास्तेमें बरगदका वृक्ष। किसी समय गर्मियोंमें कोई थका बटोही वहाँ पेड़के नीचे सो गया। फिर, कुछ क्षण बाद उसके मुँहसे छाया हट गई। सूर्यकी धूपसे उसके मुँह को

तपते देख वृक्षपर स्थित हंसने दोनों पंखोंको फैला कर छाया कर दी। तब दुष्ट-स्वभाव होने से कौआ उसके मुँहपर बीट करके भाग गया। बटोहीने उसका कारण ढूंढते ऊपर नजर दौड़ाई, और हंसको देख बाणसे उसे मार दिया]।

कदाचित् (किसी समय) **सुप्तः** (सोया) **परिश्रान्तः** (थका) **क्षणानन्तरे** (क्षण बाद) **पक्षः** (पंख) **पुरीषं** (विष्ठा) **उत्सर्गः** (छोड़ना) **पलायितः** (भागा) **उर्द्ध्वं** (ऊपर)

सन्धिः—

३३. वर्गके प्रथम वर्ण + ह = वर्गका तृतीय वर्ण + चतुर्थ वर्ण = वाक् + हरिः = वाग्घरिः, अच् + हीनं = अज्झीनं, मत् + हरिः = मद्धरिः, ककुप् + हासः = ककुब्भासः, षट् + हलानि = षड्ढलानि।

दकारान्त स्त्रीलिंग शरद् शब्द—

प्रथमा, सं०	शरद्	शरदौ	शरदः
द्वितीया	"	"	"

शेष रूप मरुद् शब्द की तरह।



चतुर्दशः पाठः

अस्ति कौशाम्बी नाम नगरी। तस्यां चन्दनदासो नाम श्रेष्ठी महद्धनो वसति, तेन वृद्धकाले धनमदात् लीलावती नाम वणिक्-पुत्री यौवनवती परिणीता।

धनलोलुपाभ्यां पितृभ्यां प्रदत्ता, धन-संपत्तिपरिवृताऽपि सा वृद्धे पतौ विरक्ता। अथ तस्याः संगतिः प्रातिवेशिकेन अल्पधनेन वणिक्पुत्रेण काले स्नेहे परिणता। एकस्यां निशीथिन्यां द्वौ अपि प्रभूतं रत्नसुवर्णं आदाय श्रेष्ठिगृहात् पलायितौ।

[है कौशाम्बी नामक नगरी। उसमें चन्दनदास नामक बहुत धनी सेठ रहता था। उसने धनके गर्वसे बुढ़ापेमें लीलावती नामक बनियेकी युवती पुत्री ब्याही।

धनके लोभी माता-पिता द्वारा प्रदत्त धन-संपत्तिसे घिरी भी वह वृद्ध पतिमें विरक्त (थी)। फिर उसकी पड़ोसी कम धनवाले बनियेके लड़केके साथ संगत काल पाकर प्रेममें परिणत हो गई। एक रातको दोनों ही बहुत सा सोना, जवाहिर लेकर सेठके घरसे भाग गये।

महद्धनः (बहुत धनी) **यौवनवती** (युवती) **पितरौ** (माता-पिता) **परिवृता** (घिरी) **पतौ** (पतिमें) **प्रातिवेशिकः** (पड़ोसी) **अल्पधनः** (कम धनवाला) **परिणता** (बदल गई) **निशीथिनी** (रात) **प्रभूतं** (बहुत) **आदाय** (ले कर) **पलायितः** (भाग गया)

सन्धिः—

३४. वर्गके पहिले चार वर्ण, श, ष, स, ह यदि पदके अन्तमें हों, तो वह वर्गके तृतीय वर्णका रूप लेते हैं:

वाक्>वाग्, अच्>अज्, ककुप्>ककुब्, दिश्>दिग्, मधुलिह्>मधुलिड्

चकारान्त स्त्रीलिंग वाच् (वाणी) शब्द—

प्रथमा, सं०	वाक्	वाचौ	वाचः
द्वितीया	वाचम्	,,	,,
तृतीया	वाचा	वाग्भ्यां	वाग्भिः
चतुर्थी	वाचे	,,	वाग्भ्यः
पंचमी	वाचः	,,	,,
षष्ठी	,,	वाचोः	वाचाम्
सप्तमी	वाचि	,,	वाक्षु



पंचदशः पाठः

भ्रान्तं देशमनेकदुर्गविषमं प्राप्तं न किंचित् फलम्,
त्यक्त्वा जातिकुलाभिमानमुचितं सेवा कृता निष्फला।
भुक्तं मानविवर्जितं परगृहे साशङ्कया काकवत्,
तृष्णे दुर्गति पापकर्मनिरते नाद्यापि सन्तुष्यसि।

[अनेक दुर्गम कठिन देश घूमे, कुछ फल नहीं मिला,
जाति और कुलके उचित अभिमानको छोड़ निष्फल सेवा की।
दूसरेके घर विना मानके कौवे की तरह डरते खाया,
हे पापकर्ममें निरत दुष्ट-बुद्धि तृष्णा, तू अभी भी नहीं सन्तुष्ट होती है ?]

भ्रान्तं (फिरा) त्यक्त्वा (छोड़ कर) भुक्तं (खाया) मानविवर्जितं (मान के विना) साशंका (आशङ्का सहित) सन्तुष्यसि (संतोष करती)

सन्धिः—

३५. द्विवचनवाले शब्दके ई, ऊ, ए जैसे के तैसे रहते हैं—

हरी + एतौ = हरी एतौ, भानू + इमौ = भानू इमौ, गंगे + एतौ = गंगे एतौ ।

३६. एकाक्षर स्वर की भी संधि नहीं होती–इ इन्द्रः, उ उमेशः ।

शकारान्त स्त्रीलिंग दिश् शब्द—

प्रथमा, सं०	दिक्	दिशौ	दिशः
द्वितीया	दिशं	,,	,,

शेष रूप वाच् जैसे ।

षोडशः पाठः

अस्ति चम्पा नाम नगरी । तत्र कोपि परिव्राजकारामः, यत्र चूडामणिकर्णो नाम परिव्राजकः प्रतिवसति । स भोजनं कृत्वा अवशिष्टेन अन्नेन सहितं भिक्षापात्रं नागदन्तके अवस्थाप्य स्वपिति । तदा एकः मूषिकः तत् खादति । अथ तस्य सहायको वीणाकर्णो नाम परिव्राजक आगतः । तेन सह कथासंलापे मूषिकस्य त्रासार्थं चूडाकर्णः वंशखंडेन भूमिं अताडयत् । वीणाकर्णः अवदत्–' सखे किं मम कथायां विरक्तः ?' चूडाकर्णेनोक्तं–' मित्र, नाहं विरक्तः, पश्य, अयं मूषिकः मम भिक्षान्नं खादति' ।

[है चम्पा नामक नगरी। वहाँ कोई परिव्राजकों का आराम (मठ) था, जहाँ चूडाकर्ण नामक परिव्राजक रहता था। वह भोजन करके बाकी खाद्य के साथ भिक्षापात्रको खूँटी पर रख कर सोता था। तब एक चूहा उसे खाता था। फिर, उसका मित्र वीणाकर्ण नाम परिव्राजक आया। उसके साथ बातचीत (करते) में चूडाकर्ण ने बाँसके टुकड़ेसे भूमिको पीटा। वीणाकर्णने कहा– 'क्या मेरी बात नापसन्द है ?' चूडाकर्णने कहा– 'मित्र, नापसन्द नहीं, देख, यह चूहा मेरे भिक्षान्नको खाता है']।

अन्नं (भक्ष्य) नागदन्तकः (खूँटी) स्वपिति (सोता है)
सहायः (मित्र) विरक्तः (न रुचिवाला) त्रासार्थं (डरानेके लिये)

सन्धिः—

३७. वर्गके आदिम चार वर्ण, श, ष, स + वर्ग के प्रथम द्वितीय वर्ण, श, ष, स = वर्गके प्रथम वर्ण, श, ष, स
तत् + शिवः = तत् शिवः। शरद् + कालः = शरत्कालः, आरिभ् + सते = आरिप्सते, तत् + चिनोति = तच्चिनोति।

पकारान्त स्त्रीलिंग प्रावृष् (वर्षा) शब्द—

प्रथमा, संबो०	प्रावृट्	प्रावृषौ	प्रावृषः
द्वितीया	प्रावृषं	,,	,,
तृतीया	प्रावृषा	प्रावृड्भ्यां	प्रावृड्भिः
चतुर्थी	प्रावृषे	,,	,,
पंचमी	प्रावृषः	,,	,,
षष्ठी	,,	प्रावृषोः	प्रावृषां
सप्तमी	प्रावृषि	,,	प्रावृट्सु

ऐसे ही त्विष् (प्रकाश), द्विष् (शत्रु)

सप्तदशः पाठः

अतीते मगधराष्ट्रे राजगृहे मगधराजा राज्यं करोति। मगधवासिकानां सस्यसमये मृगानां महापरिपन्थो भवति। ते मृगा अरण्ये पर्वतपार्श्वे प्रविशन्ति। तत्र एकोऽरण्यवासी मृग एकस्या ग्राम्यमृगपोतिकायाः स्नेहे बद्धः। मृगाणां पर्वतात् अवतरणकाले मृगपोतिकास्नेहपरवशः सोऽपि मृगः तैः सार्धं एव अवातरत्। अथ एतं सा मृगपोतिका अवदत्—'त्वं कोऽसि आर्य ?'

—'अहं पार्वतेयो मृगः'।

—'ग्रामा हि साशंका सभयाः, मा अस्माभिः सार्धं अवतर'।

स तस्यां अनुरक्तः, तथा सार्धं अगमद् एव।

मगधवासिकाः मृगाणां पर्वतपादाद् अवतरणकालोयमिति ज्ञात्वा प्रतिच्छन्नेषु स्थानेषु स्थिता भवन्ति। मृगपोतिका मनुष्यगंधं आघ्राय 'एको लुब्धकः स्थितः' इति मूढमृगं पुरतः कृत्वा स्वयं पश्चात् अभवत्। लुब्धकः एकेन शरप्रहारेण मृगं तत्रैव अपातयत्। (कण्डिनजातक)

[अतीत (काल) में मगधराष्ट्रमें राजगृहमें मगधराजा राज्य करता था। मगधवासियोंको फसलके समय बड़ा विघ्न होता था। मृग अरण्यमें पहाड़के नीचे प्रवेश कर गये। वहाँ एक अरण्यवासी मृग एक ग्रामीण तरुणी मृगीके प्रेममें बद्ध हो गया। मृगोंके पर्वत से उतरनेके समय तरुणी मृगीके प्रेममें पड़ा वह मृग भी उनके साथ ही उतरने लगा। उससे वह मृगपोतिका (मृगबच्ची) बोली—

—'तू कौन (है) आर्य ?'

—'मैं पर्वतीय मृग (हूँ) ।'

—'ग्राम शंका और भय-युक्त (स्थान है), मत हमारे साथ उतर ।'

उसमें अनुरक्त वह गया ही ।

मगधनिवासी 'मृगोंके पर्वतसे उतरनेका यह काल (है)' जान कर छिपे स्थानोंमें ठहरे थे । मृगपोतिका आदमीकी गन्ध सूंघ कर 'एक शिकारी खड़ा (है)' यह (सोच) मूढ मृगको आगे कर स्वयं पीछे हो गई । शिकारीने एक बाणके प्रहारसे मृगको वहीं गिरा दिया ।]

सस्यं (फसल) **महापरिपन्थः** (महा-विघ्न-बाधा) **पर्वत-पादः** (पहाड़की जड़) **ग्राम्यमृगः** (मैदानी हरिन) **पोतिका** (बच्ची) **पार्वतेयः** (पहाड़ी) **प्रतिच्छन्नं** (छिपा) **आघ्राय** (सूंघ कर) **लुब्धकः** (शिकारी)

सन्धिः—

३८. क, च, ट, त, प + अ, इ, उ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ, य, र, ल, व, ष, ह = ग, ज, ड, द, ब ।

तत् + इदं = तदिदं, पृथक् + एव = पृथगेव, षट् + अत्र = षडत्र ।

नकारान्त पुंल्लिङ्ग आत्मन् (आत्मा) शब्द—

प्रथमा	आत्मा	आत्मानौ	आत्मानः
संबोधन	हे आत्मन्	,,	,,
द्वितीया	आत्मानं	,,	आत्मनः

तृतीया	आत्मना	आत्मभ्यां	आत्मभिः
चतुर्थी	आत्मने	,,	आत्मभ्यः
पंचमी	आत्मनः	,,	,,
षष्ठी	,,	आत्मनोः	आत्मनाम्
सप्तमी	आत्मनि	,,	आत्मसु

ऐसे ही ब्रह्मन् (ब्रह्मा) यज्वन् (यज्ञ करनेवाला) सुशर्मन् (सुशर्मा) कृष्णवर्तमन् (आग)



अष्टादशः पाठः

देवि त्वन्मुखपंकजेन शशिनः शोभातिरस्कारिणा,
पश्याब्जानि विनिर्जितानि सहसा गच्छन्ति विच्छायताम् ।
श्रुत्वा ते परिवारवारवनितागीतानि भृङ्गांगना,
लीयन्ते मुकुलान्तरेषु शनकैः संजातलज्जा इव ॥
शीतांशुर्मुखमुत्पले तव दृशो, पद्मानुकारौ करौ ।
रम्भागर्भनिभं तवोरुयुगलं, बाहू मृणालोपमौ ॥

[देवि, देख, चन्द्रमाकी शोभाको तिरस्कार करनेवाले तेरे मुखकमलसे पराजित कमल, एकाएक मलिन हो गये । तेरे परिवारकी गायिकाओंकी गीतोंसे भ्रमरियाँ लज्जित हो धीरेसे कलियोंमें विलीन हो रही हैं । तेरा मुंह चन्द्रमा, आंखें दो कमल, दोनों हाथ पद्मकी तरह, तेरी दोनों जांघें केलेके गर्भ जैसी, बाहें कमलनाल जैसी हैं ।]

शशिन् (चन्द्र) **तिरस्कारिन्** (तिरस्कार करनेवाला) **अब्जं** (कमल) **विनिर्जितानि** (पराजित) **सहसा** (एकाएक) **विच्छायता** (फीकापन) **परिवारः** (परिचारक, परिचारिका) **वारवनिता** (चेटी) **भृङ्गांगना** (भ्रमरी) **लीयन्ते** (लीन होती है) **मुकुलान्तरं** (कलियाँ) **शनकैः** (धीरे) **संजातलज्जा** (लज्जित) **शीतांशुः** (चांद) **उत्पलं** (कमल) **पद्मानुकारः** (कमलजैसा) **करः** (हाथ) **रम्भा** (केला) **निभः** (सदृश) **उरु** (जंघा) **युगलं** (दो) **मृणालोपमः** (कमलनाल जैसा) ·

नकारान्त नपुंसकलिङ्ग नामन् (नाम) शब्द—

प्रथमा	नाम	नामनी	नामानि
संबोधन	हे नामन्	,,	,,
द्वितीया	नाम	,,	,,
तृतीया	नाम्ना	नामभ्यां	नामभिः
चतुर्थी	नाम्ने:	,,	नामभ्यः
पंचमी	नाम्नः	,,	,,
षष्ठी	,,	नाम्नोः	नाम्नाम्
सप्तमी	नाम्नि, नामनि	,,	नामसु

ऐसे ही **लोमन्** (रोआँ), **व्योमन्** (आकाश), **प्रेमन्** (प्रेम)

· कृ (कर) धातुके रूप वर्तमाकाल (लट्) में—

प्रथम पुरुष	करोति	कुरुतः	कुर्वन्ति
मध्यमपुरुष	करोषि	कुरुथः	कुरुथ
उत्तमपुरुष	करोमि	कुर्वः	कुर्मः

एकोनविंशः पाठः

अस्ति भागीरथीतीरे गृध्रकूटनाम्नि पर्वते महान् वटवृक्षः। तस्य कोटरे दैवदुर्विपाकेन गलितनखनयनः जरद्गवनामा गृध्रः प्रतिवसति। तज्जीवनाय कृपया पक्षिणः स्वाहारात् किंचित् तस्मै यच्छन्ति। तेन स जीवति, तेषां शावकानां रक्षां च करोति। एकस्मिन् काले कुटिलो बिडालः यतिवेषोपेतः विनयं प्रदर्श्य जरद्गवेन अनुज्ञातः तत्रैव अतिष्ठत्। यदा पक्षिणः दिवा अहाराय निर्गताः, तदा बिडालेन शावकानां भक्षणं आरब्धम्। गतेषु दिनेषु शावकानां ह्रासं दृष्ट्वा गृद्ध्रे जातशङ्काः पक्षिणः तं चंचुभिः अमारयन्!

[है गंगातीरमें गृध्रकूटनामक पर्वतपर बड़ा बरगदका पेड़। उसके कोटरमें भाग्यके बुरे फेरसे नख-नेत्र-रहित जरद्गव नामक गिद्ध बसता था। कृपा करके उसकी जीविकाके लिये पक्षी अपने आहारमेंसे कुछ दे देते थे। तिससे वह जीता और उनके बच्चोंकी रक्षा करता था। एक समय एक कुटिल बिल्ला साधुका भेष धर नम्रता दिखा जरद्गवकी अनुमतिसे वहाँ ही ठहर गया। जब पक्षी दिनमें आहारके लिये निकल जाते, तब बिल्लेने बच्चोंको खाना शुरू किया। (कुछ) दिन बीतने पर बच्चोंको कम देख गिद्धपर सन्देह कर पक्षियोंने उसे चोंचोंसे मार दिया।]

कोटरं (खोंड) गलितः (गल गया) यच्छन्ति (देते) शावकः (बच्चा) यतिवेषः (संन्यासीका भेस) उपेतः (सहित) विनयः (नम्रता, सुशीलता) प्रदर्श्य (दिखा कर) अनुज्ञातः

(अनुमति पाया) **द्विवा** (दिनमें, अव्यय) **निर्गतः** (निकल गया) **आरब्धं** (आरम्भ किया)

सन्धिः—

३९. ड्+ड = ड, तृड्+डः = तृड्डः ।

४०. इ+र्+र = ई+र, हरिर्+राजते = हरी राजते ।

विभुर्+रमणीयः = विभू रमणीयः ।

४१. ०—ड्+ड = ० (दीर्घ) = डः, तृड्+डः = तॄडः ।

नकारान्त पुंल्लिङ्ग राजन् (राजा) शब्द—

प्रथमा	राजा	राजानौ	राजानः
संबोधन	हे राजन्	,,	,,
द्वितीया	राजानं	,,	राज्ञः
तृतीया	राज्ञा	राजभ्यां	राजभिः
चतुर्थी	राज्ञे	,,	राजभ्यः
पंचमी	राज्ञः	,,	,,
षष्ठी	,,	राज्ञोः	राज्ञाम्
सप्तमी	राज्ञि, राजनि	,,	राजसु

ऐसे ही **महिमन्** (महिमा), **गरिमन्** (गरिमा, गौरव) **सुनामन्** (सुनाम) ।

द्वितीया बहुवचनमें—**महिम्नः, गरिम्णः, सुनाम्नः** ।

अस् (होना) धातुका वर्तमान (लट्) में रूप—

प्रथम पुरुष	अस्ति	स्तः	सन्ति
मध्यम ,,	असि	स्थः	स्थ
उत्तम ,,	अस्मि	स्वः	स्मः

विंशः पाठः

अथ वासवदत्तायाः अतिप्रिया कलावती नाम सखी कन्दर्प-केतुं अवदत्—'आर्यपुत्र, नायं कथानां अवसरः। अतो लघुतर-मेव कथयामि। तव कृते या यातना एतयाऽनुभूता, सा यदि नभः पत्रं, सागरो मसी ब्रह्मा च लेखको भवति, तर्हि किमपि कथमपि अनेकैः कल्प-सहस्रैः स्तोकं लिखितुं शक्नोति।'

[तब वासवदत्ताकी अतिप्रिय कलावती नामक सखी कन्दर्पकेतु से बोली—'आर्यपुत्र, यह (बहुत) बातोंका समय नहीं है। इसलिये थोड़ेमें कहती हूँ। तेरे लिये इसने जो जो यातना सही, उसे यदि आकाश पत्र, समुद्र दवात और ब्रह्मा लेखक हो, तो कुछ अनेक हजार कल्पोंमें थोड़ा सा लिख सकता है।]

लघुतरं (जल्दी, थोड़ा) **तव कृते** (तेरे लिये) **अनुभूता** (अनुभव किया) **नभस्** (आकाश) **पत्रं** (ताल या भूर्जपत्र) **मसी** (स्याही) **किमपि** (कुछ) **कथमपि** (कैसे भी) **स्तोकं** (थोड़ा)

ऊकारान्त पुंल्लिङ्ग स्वयंभू (अपने उत्पन्न) शब्द—

प्रथमा	स्वयंभूः	स्वयंभुवौ	स्वयंभुवः
संबोधन	हे स्वयंभूः	"	"
द्वितीया	स्वयंभुवम्	"	"
तृतीया	स्वयंभुवा	स्वयंभूभ्यां	स्वयंभूभिः

चतुर्थी	स्वयंभुवे	स्वयंभूभ्यां	स्वयंभूभ्यः
पंचमी	स्वयंभुवः	,,	,,
षष्ठी	,,	स्वयंभुवोः	स्वयंभूनां
सप्तमी	स्वयंभुवि	,,	स्वयंभूषु

ऐसे ही स्वभू (स्वय जात), सुभूः (अच्छा उत्पन्न)



एकविंशः पाठः

अस्ति जम्बूद्वीपे विन्ध्यो नाम गिरिः, तत्र चित्रवर्णो नाम मयूरः पक्षिराजो निवसति। एकदा तस्य अनुचरपक्षिभिः उक्तं–"वयं दग्धारण्यमध्ये चरन्तः अवलोकिताः पृष्टाश्च—'के यूयं कुतः समागताः?' ततोऽस्माभिः उक्तं—'कर्पूरद्वीपस्य राजचक्रवर्तिनो राजहंसस्यानुचरा वयं, देशान्तरं द्रष्टुमागताः।' तैः पृष्टं—'एतयोः देशयोः कतरो भद्रतरो राजा वा?' ततोऽस्माभिः उक्तं—'आः, किं वदथ? महदन्तरं, यतः कर्पूरद्वीपः स्वर्गैकदेशः, तत्र राजा च द्वितीयः स्वर्गपतिः। तं वर्णयितुं न शक्नोमि। आगच्छत अस्मद्देशे, सर्वं स्वयं पश्यत।' अस्मद्वचनं श्रुत्वा पक्षिणः सकोपा अभवन्।"

[है भारतमें विंध्य नामक पर्वत, वहाँ पक्षियोंका राजा चित्रवर्ण नामक मोर रहता था। एक बार उसके अनुचर पक्षियोंको दग्धा-

रण्यमें चरते देख (वहाँके पक्षियोंने) पूछा—'तुम कौन, कहाँसे आये ?' तब हमने कहा—'कर्पूरद्वीपके चक्रवर्ती राजा राजहंसके हम अनुचर हैं, देशोंको देखनेके लिये आये (हैं)।' उन्होंने पूछा-'इन दोनों देशोंमें कौन देश या राजा अधिक अच्छा है ?' तब हमने कहा—'आः, क्या कहते हो ? भारी अन्तर (है), क्योंकि कर्पूरद्वीप स्वर्गका एक भाग है, और वहाँका राजा दूसरा स्वर्ग-पति (इन्द्र)। उसका वर्णन नहीं कर सकते। आओ हमारे देशमें, सब स्वयं देखो'। हमारी बात सुन पक्षी क्रुद्ध हुये]।

अनुचरः (सेवकः) **अवलोकितः** (देखा गया) **पृष्टः** (पूछा गया) **भद्रतरः** (दोमें अधिक बढ़िया) **महदन्तरं** (भारी फरक) **यतः** (क्योंकि)

ओकारान्त पुंल्लिङ्ग और स्त्रीलिङ्ग गो (गाय, बैल) शब्द—

प्रथमा	**गौः**	**गावौ**	**गावः**
सम्बोधन	**हे गौः**	,,	,,
द्वितीया	**गाम्**	,,	**गाः**
तृतीया	**गवा**	**गोभ्यां**	**गोभिः**
चतुर्थी	**गवे**	,,	**गोभ्यः**
पंचमी	**गोः**	,,	,,
षष्ठी	,,	**गवोः**	**गवाम्**
सप्तमी	**गवि**	,,	**गोषु**



द्वाविंशः पाठः

पश्चात् तैः पक्षिभिः उक्तं—'अरे पाप दुष्ट वक, अस्माकं भूमौ चरन्तोऽस्माकं स्वामिनं अधिक्षिपसि ? तन्न क्षन्तव्यं अस्माभिः' इत्युक्त्वा पुनश्च संक्रुद्धा अवदन्—'पश्य रे मूर्ख, स तव राजा सर्वथा मृदुः, तस्य राज्याधिकारो नास्ति। एकान्ततो मृदुः करतलगतमपि राज्यं रक्षितुं अक्षमः, कथं स पृथिवीं शास्ति ? यूयं च कूपमण्डूकाः। शृणुत—

सेवितव्यो महावृक्षः फलच्छायासमन्वितः।
यदि दैवात् फलं नास्ति छाया केन निवारिता।

[पीछे उन पक्षियोंने कहा—'अरे नीच दुष्ट बगले, हमारी भूमिमें चरते हमारे स्वामीकी निन्दा करता है ? सो हम नहीं सह सकते।' यह कह बहुत क्रुद्ध हो बोले—'देख रे मूर्ख, तुम्हारा राजा बिल्कुल नरम (है), उसे राज्य (करने) का अधिकार नहीं। बिल्कुल नरम (राजा) हाथमें स्थित राज्यको भी रखनेमें असमर्थ (होता है), कैसे वह पृथिवीका शासन कर (सकता) है और तुम कूयें के मेंढक (हो), सुनो—

फल और छायावाले महावृक्ष का सेवन करना चाहिये।
दैवसे यदि फल नहीं है, (तो) छाया किसने रोकी।]

पापः (पापी, बुरा) **अधिक्षिपति** (निन्दा करता है) **मृदुः** (नरम) **करतलं** (हथेली) **शास्ति** (शासन करता है) **सेवितव्यः** (सेवनीय)

तकारान्त (वत्प्रत्ययान्त) पुंल्लिङ्ग भगवत् (भगवान्) शब्द—

प्रथमा	भगवान्	भगवन्तौ	भगवन्तः
सम्बोधन	हे भगवन्	,,	,,
द्वितीया	भगवन्तं	,,	भगवतः
तृतीया	भगवता	भगवद्भ्यां	भगवद्भिः
चतुर्थी	भगवते	,,	भगवद्भ्यः
पंचमी	भगवतः	,,	,,
षष्ठी	,,	भगवतोः	भगवतां
सप्तमी	भगवति	,,	भगवत्सु

ऐसे ही भवत् (भवान्, आप), धीमत् (धीमान्) आयुष्मत् (आयुष्मान) भी।

त्रयोविंशः पाठः

अस्ति मगधदेशे, धर्मारण्यसमीपे शुभदत्तेन लेखकेन आरब्धो विहारः। तत्र क्रकचेन दार्यमाणस्य काष्ठस्तम्भस्य काष्ठखण्डद्वय-मध्ये कीलकः स्थापितः। तत्रैकः वानरयूथः क्रीडन् आगतः। तेषु एको वानरः तं कीलकं हस्ताभ्यां धृत्वा उपविष्टः। तत्र तस्य लांगूलं काष्ठखण्डद्वयस्य मध्ये प्रविष्टम्। अनन्तरं च स स्वचापल्येन कीलकं महाप्रयत्नेन आकृष्टवान्। आकृष्टे च कीलके लांगूलं तत्रैव चूर्णितं अभवत्।

[है मगधदेशमें धर्मारण्यके पास कायस्थ शुभदत्त द्वारा (बनाना) आरम्भ किया विहार (बौद्ध मठ)। वहाँ आरासे चीरे

जाते काठके खम्भेके दो खण्डोंके बीच कीला रखा (था)। तहाँ वानरोंका एक झुण्ड खेलते हुए आ गया। उसमेंसे एक वानर उस कीलको दोनों हाथोंसे पकड़ कर बैठ गया। वहाँ उसकी दुम दोनों काठके टुकड़ोंके बीच घुस गई। पीछे उसने अपनी चपलतासे कीलको बड़े जोरसे खींच लिया और कीलके आनेपर दुम वहीं (दबकर) पिस गई।]

लेखकः (कायस्थ) **आरब्धः** (बनाना आरम्भ किया) **क्रकचः** (आरा) **विहारः** (बौद्ध मठ) **दार्यमाणं** (चीरा जाता) **कीलकः** (खूँटा) **यूथः** (झुण्ड) **धृत्वा** (धर के) **उपविष्टः** (बैठा) **लांगूलं** (दुम) **अनन्तरं** (पीछे) **प्रविष्टं** (घुस गया) **चापल्यं** (चञ्चलता) **आकृष्टवान्** (खींच लिया) **चूर्णितं** (पिस गया)।

सकारान्त पुंल्लिङ्ग तस्थिवस् (खड़ा) शब्द—

प्रथमा	तस्थिवान्	तस्थिवांसौ	तस्थिवांसः
सम्बोधन	हे तस्थिवन्	,,	,,
द्वितीया	तस्थिवांसम्	,,	तस्थुषः
तृतीया	तस्थुषा	तस्थिवद्भ्यां	तस्थिवद्भिः
चतुर्थी	तस्थुषे	,,	तस्थिवद्भ्यः
पंचमी	तस्थुषः	,,	,,
षष्ठी	,,	तस्थुषोः	तस्थुषाम्
सप्तमी	तस्थुषि	,,	तस्थिवत्सु

ऐसे ही **निषेदिवस्** (बैठा), **जग्मिवस्** (जाता), **विद्वस्** (विद्वान्, पण्डित)।

चतुर्विंशः पाठः

(रामायण नाटक से)—

सीता—(स्वगतं)—नहि रूपमेव, स्वरोऽपि स एव। (प्रकाशं) वत्स, चिरं जीव।

भरतः—अनुगृहीतोऽस्मि।

सीता—एहि वत्स, भ्रातुः मनोरथं पूरय।

भरतः—एवमस्तु (रामं उपगम्य) आर्य, अभिवादये, भरतोऽहमस्मि।

रामः—(सहर्षं)—एहि, एहि इक्ष्वाकुकुमार, स्वस्तीति, आयुष्मान् भव। वक्षः प्रसार्य सुविपुलेन भुजद्वयेन मां आलिंग्य मुखचन्द्रेण व्यसनेन चिरदग्धं रामस्य एतत् शरीरं शीतलय।

भरतः—अनुगृहीतोऽस्मि।

[सीता—(स्वगतं)—रूप ही नहीं स्वर भी वही (है)। (खुल कर) वत्स, चिरंजीवी हो।

भरत—अनुगृहीत हूँ।

सीता—आ वत्स, भाई के मनोरथको पूरा कर।

भरत—ऐसा (ही) हो। (रामके) पास जा आर्य, अभिवादन करता हूँ, मैं भरत हूँ।

राम—(हर्षके साथ)—आ, आ इक्ष्वाकुकुमार, स्वस्ति, आयुष्मान् हो। छाती फैला कर अतिविशाल दोनों भुजाओंसे मुझे आलिंगन कर। (अपने) मुखचन्द्रसे दुःखसे देरसे जलते रामके इस शरीर को ठंडा कर।

भरत—अनुगृहीत हूँ ।]

स्वगतं (अपने मनके भीतर) **प्रकाशं** (प्रकट बात करते) **अभिवादयते** (नमस्कार करता) **वक्षस्** (छाती) **व्यसनं** (दुःख) **दग्धं** (जला) **शीतलयति** (ठंडा करता है) **सुविपुलं** (बहुत विशाल) ।

सन्धिः—

४२. **म् + व्यंजन = ं , बुद्धम् + शरणम् = बुद्धं शरणम् ।**

सकारान्त पुंल्लिंग चन्द्रमस् (चांद) शब्द—

प्रथमा	चन्द्रमा	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
संबोधन	हे चन्द्रमः	चन्द्रमसौ	चन्द्रमसः
द्वितीया	चन्द्रमसं	,,	,,
तृतीया	चन्द्रमसा	चन्द्रमोभ्यां	चन्द्रमोभिः
चतुर्थी	चन्द्रमसे	,,	चन्द्रमोभ्यः
पंचमी	चन्द्रमसः	,,	,,
षष्ठी	,,	चन्द्रमसोः	चन्द्रमसाम्
सप्तमी	चन्द्रमसि	,,	चन्द्रमस्सु

ऐसे ही **वेधस्** (ब्रह्मा), **सुमनस्** (सुन्दर मनवाला) **सुवचस्** (सुन्दर वचनवाला)



पंचविंशः पाठः

सुमन्त्रः—(उपेत्य) जयतु आयुष्मान् ।

रामः—तात ।

सुमंत्रः—नरपतिनिधनं, भवतः प्रवासं, भरतविषादं, कुलस्य अनाथतां दृष्ट्वापि जीवामि ।

रामः—हा तात, सुराणां साहाय्यार्थं सुरपुरे गतः, अस्मान् त्यक्त्वा पितृभिः सह तत्र रमसे ।

सुमंत्रः—हा मन्दभाग्य, एतदेव द्रष्टव्यम् ।

सीता—कथं रुदन्तं आर्यपुत्रं पुनरपि रोदयति तातः ?

रामः—मैथिलि, एष पर्यवस्थापयामि हृदये, वत्स लक्ष्मण, आपः ।

लक्ष्मणः—यद् आज्ञापयति आर्यः ।

भरतः—आर्य, न खलु उचितम् । अहं अधिकारी अहमेव यास्यामि । (कलशं गृहीत्वा निष्क्रम्य प्रविश्य च) एता आपः ।

रामः—(आचम्य) मैथिलि, अयं स्वस्थः अहम् ।

भरतः—प्रसीदतु आर्यः राज्यं रक्षतु ।

रामः—वत्स, मा मा एवं, पितुराज्ञया अहमागतो वनं, न वत्स, दर्पात्, न भयात् । अस्माकं इक्ष्वाकुकुलं सत्यधनं, कथं भवान् नीचपथे प्रवर्तसे ?

सुमंत्रः—अथ इदानीं इदं अभिषेकोदकं क्व तिष्ठतु ?

[सुमंत्र—(पास जा) आयुष्मान् की जय हो ।

राम—तात ।

सुमंत्र—राजाके मरने, आपके प्रवास, भरतके विषाद, कुलको अनाथ हुआ देख कर भी जीता हूँ ।

राम—हा तात, देवताओंकी सहायता के लिये सुरपुर गये । हमें छोड़ पितरोंके साथ वहाँ रमते हो ।

सुमंत्र—हा अभागा, यही देखनेको (था) ।

सीता—क्या रोते हुये आर्यपुत्र को और भी तात रुला रहे हैं ।

राम—मैथिलि, यह हृदयमें (दुःखको) रोकता हूँ, वत्स लक्ष्मण, पानी (लाओ) ।

लक्ष्मण—जो आज्ञा देते हैं आर्य ।

भरत—आर्य (यह) उचित नहीं । मैं (इसका) अधिकारी (हूँ) । मैं ही (पानी लाने) जाऊँगा । (घड़ा ले बाहर जा फिर आ कर) यह पानी (है) ।

राम—(आचमन कर) मैथिलि, यह मैं स्वस्थ (हो गया) ।

भरत—कृपा करें आर्य, राज्यकी रक्षा करें (राज रक्खें) ।

राम—वत्स, मत मत ऐसा (कहो), पिताकी आज्ञासे मैं वन आया, वत्स, अभिमानसे भयसे, नहीं (आया) । हमारे इक्ष्वाकुकुलका धन सत्य (है), कैसे आप नीच रास्ते में जाते हैं ?]

सुमंत्र—फिर, अब यह अभिषेक-जल कहाँ रहे ? ।

सन्धिः—

४३. म् + व्यंजन = ं, आक्रम् + स्यते = आक्रंस्यते, यशान् + सि = यशांसि ।

सकारान्त नपुंसकलिंग पयस् (दूध) शब्द—

प्रथमा	पयः	पयसी	पयांसि
संबोधन	हे पयः	,,	,,
द्वितीया	पयः	,,	,,
तृतीया	पयसा	पयोभ्यां	पयोभिः
चतुर्थी	पयसे	,,	पयोभ्यः
पंचमी	पयसः	,,	,,
षष्ठी	,,	पयसोः	पयसां
सप्तमी	पयसि	,,	पयस्सु

ऐसे ही वयस् (आयु), यशस् (कीर्ति), मनस् (म

षकारान्त नपुंसकलिंग धनुष् (धनु) शब्द—

प्रथमा	धनुः	धनुषी	धनूंषि
संबोधन	हे धनुः	,,	,,
द्वितीया	धनुः	,,	,,
तृतीया	धनुषा	धनुर्भ्यां	धनुर्भिः
चतुर्थी	धनुषे	,,	धनुर्भ्यः
पंचमी	धनुषः	,,	,,
षष्ठी	,,	धनुषोः	धनुषां
सप्तमी	धनुषि	,,	धनुष्षु

ऐसे ही चक्षुस् (आँख) भी।



षड्विंशः पाठः

रामः—यत्र मे मात्रा उक्तं, तत्रैव तावत् तिष्ठतु ।

भरतः—प्रसीदतु आर्यः । आर्य, अलमिदानीं व्रणे प्रहर्तुम् । अपि मातुर्दोषो न मे दोषः ।

यस्य मे पिताऽभवत् पिता यस्य मे भ्राता भवान् ।
वरद, भरतमार्तं पश्य तावत् यथावत् ॥

सीता—आर्यपुत्र, अतिकरुणं मंत्रयते भरतः ।

रामः—सन्तुष्टोऽस्मि वत्स, तव गुणैः निर्जितोऽस्मि; किन्तु भवादृशं पुत्रं प्राप्य नृपतिः मिथ्यावादी भविष्यति, किमिदं उचितं ते ?

भरतः—यावद् भवतः नियमावसानं भविष्यति, तावत् तव पादमूले इह अहमपि भविष्यामि ।

रामः—मैवं, मम शपथेन शापितो यदि राज्यं न परिरक्षसि ।

[रामः—जहाँ मेरी माताने कहा, तहाँ रहे ।

भरत—दया करें आर्य । आर्य, अब घावमें चोट करनेसे बस । और माताका दोष मेरा दोष नहीं ।

जिस मेरे पिता पिता (जैसे) हुए, जिस मेरे भाई आप हैं ।
हे वरदाता, आर्त भरतको जरा ठीकसे देखें ।

सीता—आर्यपुत्र, बहुत करुण कहता है भरत ।

राम—सन्तुष्ट हूँ वत्स, तेरे गुणोंसे जीत लिया गया हूँ । किन्तु आप जैसे पुत्रको प्राप्त कर नृपति (दशरथ) झूठ बोलने वाले होंगे, क्या यह उचित है ?

भरत—जब तक आपके नियमकी समाप्ति होगी, तब तक (आपके) चरणोंमें मैं भी यही होऊँगा ।

राम—ऐसा नहीं, मेरी शपथ तुम्हें है, यदि राज्यको नहीं रक्षा करते ।

प्रसीदतु (प्रसन्न हों, रुष्ट न हों, दया करें) अलम् (बस) व्रणम् (घाव) वरद (कृपालु) आर्तः (दुःखी) नियमः (व्रत) अवसानं (समाप्ति) ।

सकारान्त पुंल्लिङ्ग ज्यायस् (बढ कर) शब्द—

प्रथमा	ज्यायान्	ज्यायांसौ	ज्यायांसः
सम्बोधन	हे ज्यायान्	,,	,,
द्वितीया	ज्यायांसम्	,,	,,
तृतीया	ज्यायसा	ज्यायोभ्यां	ज्यायोभिः

शेष रूप पयस् जैसे ।

सन्धिः—

४४. ङ, ण, न + स्वर = ङ्ङ, ण्ण, न्न, प्रत्यङ् + आत्मा = प्रत्यङ्ङात्मा, सुगण् + ईशः = सुगण्णीशः, सन् + इन्द्रः = सन्निन्द्रः ।



सप्तविंशः पाठः

:—हन्त, किमुत्तरं ददामि ? समयेन पालयिष्यामि ते राज्यम् ।

—वत्स, कः समयः ?

:—मम हस्ते निक्षिप्तं तव राज्यं चतुर्दशवर्षान्ते गृहीतव्यम् ।

—एवमस्तु ।

:—आर्य लक्ष्मण, श्रुतं ? आर्ये, श्रुतम् ? तात, श्रुतम् ?

—वयं श्रोतारः ।

:—आर्य, अन्यमपि वरं याचितुं इच्छामि ।

—वत्स, किमिच्छसि ? किमहं ददानि ?

:—तव पादसेविते एते पादुके मह्यं देहि, यावत् भवान् आयास्यति, तावत् अनयोरेव शासने अहं राज्यं परिपालयिष्यामि ।

—(स्वगतं) हन्त भोः—

सुचिरेणापि कालेन यशः किंचित् मयार्जितम् ।
अचिरेणैव कालेन भरतेनाद्य संचितम् ।

:—आर्यपुत्र, ननु यच्छसि भरताय प्रथमयाचनम् ?

—तथास्तु वत्स, गृहाण ।

रत—ओह, क्या उत्तर दूँ ? शर्तके साथ तेरे राज्यको पालूँगा ।

—वत्स, क्या है शर्त ?

—मेरे हाथमें रक्खे तेरे राज्यको १४ वर्षके अन्तमें लेना होगा ।

राम—ऐसा ही (सही)।

भरत—आर्य लक्ष्मण, सुना ? आर्ये, (सीता) सुना ? तात (सुमन्त्र), सुना ?

सभी—हम श्रोता हैं ।

भरत—आर्य, और भी (एक) बर चाहता हूँ ।

राम—वत्स, क्या चाहता है ? क्या दूँ ?

भरत—तेरे पादों द्वारा सेवित इन दोनों पादुकाओंको मुझे दे । जब तक तू आयेगा, तब तक इन्हींके शासनमें मैं राज्यका पालन करूँगा ।

राम—(अपने मन में) ओह, हे—

बहुत कालमें मैंने कुछ यश अर्जित किया ।

(उसे) थोड़े ही कालमें आज भरतने संचित कर लिया

सीता—आर्यपुत्र, भरतकी प्रथम याचना को दे रहे हो ना ?

राम—वैसाही हो वत्स, ले ।]

इकारान्त बहुवचनान्त सर्वलिंगी त्रि (तीन) शब्द—

	पुंल्लिंग	नपुंसकलिंग	स्त्रीलिंग
प्रथमा	त्रयः	त्रीणि	तिस्रः
द्वितीया	त्रीन्	,,	,,
तृतीया	त्रिभिः	त्रिभिः	तिसृभिः
चतुर्थी	त्रिभ्यः	त्रिभ्यः	तिसृभ्यः
पंचमी	,,	,,	,,
षष्ठी	त्रयाणां	त्रयाणां	तिसृणां
सप्तमी	त्रिषु	त्रिषु	तिसृषु

रकारान्त चतुर् (चार) शब्द भी बहुवचनान्त, सर्वलिंगी

	पुंल्लिङ्ग	नपुंसकलिङ्ग	स्त्रीलिङ्ग
प्रथमा	चत्वारः	चत्वारि	चतस्रः
संबोधन	चतुरः	,,	,,
द्वितीया	चतुर्भिः	चतुर्भिः	चतसृभिः
चतुर्थी	चतुर्भ्यः	चतुर्भ्यः	चतसृभ्यः
पंचमी	,,	,,	,,
षष्ठी	चतुर्णाम्	चतुर्णाम्	चतसृणाम्
सप्तमी	चतुर्षु	चतुर्षु	चतसृषु

अष्टाविंशः पाठः

भरतः—अनुगृहीतोऽस्मि (पादुके गृहीत्वा) तात, अत्र अभिषेकोदकं पातयितुं इच्छामि ।

रामः—तात, यद् इष्टं भरतस्य तत् सर्वं करोतु ।

सुमन्त्रः—यदाज्ञापयति आयुष्मान् (इति तथा करोति) ।

रामः—वत्स, राज्यं नाम मुहूर्तं अपि न उपेक्षितव्यं, तस्माद् अद्य एव प्रतिनिवर्त्ततां कुमारः ।

सीता—हा, अद्यैव गमिष्यति कुमारः ।

भरतः—आर्य, अद्यैवाहं गमिष्यामि,

आशावन्तः पुरे पौराः स्थास्यन्ति त्वद्दिदृक्षया ।
तेषां प्रीतिं करिष्यामि त्वत् प्रसादस्य दर्शनात् ।

[भरत—अनुगृहीत हूँ। (पादुका ले कर) तात, यहाँ (पादुकापर)
अभिषेकका जल डालना चाहता हूँ

राम—तात, भरतकी जो इच्छा हो, वह सब करो।

सुमंत्र—जो आज्ञा देते आयुष्मान् (यह कह, वैसा करता है)।

राम—वत्स, राज्य ऐसी चीज है, जिस की क्षण भर भी उपेक्षा
नहीं करनी चाहिये, इस लिये आज ही लौटे कुमार।

सीता—हा, आज ही जायगा कुमार।

भरत—आर्य, आज ही जाऊँगा,
(अयोध्या) पुरमें नागरिक तेरे देखनेकी इच्छासे
आशावान् होंगे। तेरे प्रसादको दिखा मैं उनको
खुश करूँगा।]

आकारान्त पुंल्लिंग गोपा (रक्षक) शब्द—

प्रथमा	गोपाः	गोपौ	गोपाः
संबोधन	हे गोपाः	,,	,,
द्वितीया	गोपां	,,	,,
तृतीया	गोपा	गोपाभ्यां	गोपाभिः
चतुर्थी	गोपे	,,	गोपाभ्यः
पंचमी	गोपः	,,	,,
षष्ठी	गोपः	गोपोः	गोपाम्
सप्तमी	गोपि	,,	गोपासु

ऐसे ही विश्वपा (विश्वरक्षक), सोमपा (सोमपीनेवाला),
शब्दध्मा (आवाज देनेवाला)।

एकोनत्रिंशः पाठः

अवन्तीजनपदे उज्जयिनी नाम नगरी । तत्र अचलो नाम इभ्यदारकः परिवसति, मूलदेवश्च धूर्तः । स च (मूलदेवः) रतिविचक्षणः सुरूपः कामिनीहृदयदयितः, किन्तु तस्य वराटिकापि ग्रन्थौ न भवति । तत्र च उज्जयिन्यां देवदत्ता नाम गणिका सकलगणिकाप्रधाना लब्धजयपताका परिवसति । सा च मूलदेवे रक्ता । अचलो देवदत्तायाः गेहं याति । स च महद्धनः । देवदत्ता तं न कामयते । देवदत्ता मातृकां भणति–'अम्ब, वेश्याः कीदृश्यो भवन्ति ?'

—यो ददाति तं उपचरन्ति न रूप-यौवन-गुणाढ्यम् ।

किं स हीनकुलः किं वा स्थविरो विरूपलावण्यः ।

—मा मा जल्प अम्ब, अतिदुर्लभो मूलदेवसदृशः ।

—हा हा हतासि मुग्धे, वेश्या तव सदृशा कुत्र दृष्टा ?

(अथैकस्मिन् दिने) प्रेषिता दासी अचलस्य समीपं— 'देवदत्ता इक्षुं भक्षयितुं इच्छति' । ततः समूलशाखस्य इक्षुणः पूर्णः शकटः प्रेषितः अचलेन । हसन्ती देवदत्ता भणति—

'प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व अम्ब, किमहं हस्ती, येन एवं प्रेषितः ?'

मातृकया उक्तं—'मा मा एवं भण, एतानि अग्राणि गवां चारो भविष्यति, गंडकं परदिनेऽपि परिजनः खादिष्यति । किं ते असुन्दरं जातम् ?'

(पुनः) प्रेषिता मूलदेवस्य समीपं दासी—'देवदत्ता इक्षुं याचते ।'

गृहीता कपर्दका मित्रेभ्यः, गृहीते द्व इक्षुयष्टिके। अपनीता त्वक्, कृताः चतुरंगुला गंडिकाः। समर्पिताः शरावसंपुटे, समर्पितः शरावसंपुटो दास्यै। गता दासी। समर्पितः शरावसंपुटः देवदत्तायै। सा संतुष्टा भणति 'प्रेक्षस्व अम्ब, मूलदेवस्य विचक्षणतां, क ईदृशः ?'।

—कथाकोशप्रकरण, (मूलदेवकथा)

[अवन्ती (मालव) देशमें उज्जैन नामक नगर (है)। वहाँ अचल नामक धनिक पुत्र रहता था और मूलदेव धूर्त भी। वह (मूलदेव) अति चतुर, सुन्दर, कामिनियोंके हृदयका प्रिय (था), किन्तु उसके गांठमें कौड़ी भी नहीं थी। और उस उज्जैनमें रहती थी देवदत्ता नामक गणिका सारी गणिकाओंकी प्रधाना (गीत-नृत्य-सौन्दर्यमें) विजयपताका-प्राप्त। और वह मूलदेव पर अनुरक्त थी। अचल देवदत्ताके घर जाया करता था, और महाधनी था। देवदत्ता उसे नहीं चाहती थी। देवदत्ताने धाईसे पूछा—'अम्मा, वेश्यायें कैसी होती हैं ?'

—जो देता है, उसकी सेवा करती हैं, रूप-यौवन-गुणसे युक्तकी नहीं। चाहे वह नीचकुलका चाहे बड़ा, चाहे रूप-लावण्यके विना हो।

—मत मत (ऐसा) कह अम्मा, मूलदेव समान मिलना दुर्लभ है।

—हाय, हाय, मूढ़ा, तू मारी गई, तेरे समान वेश्या कहाँ देखी गई ?

(तब एक दिन उसने) अचलके पास दासी भेजी—'देवदत्ता गन्ना खाना चाहती है।'

तब अचलने जड़ और शाखासहित गन्नेसे भरी एक गाड़ी भेज दी। हँसती हुई देवदत्ता कहने लगी—'देख देख अम्मा, क्या मैं हाथी (हूँ), कि ऐसा भेजा ?'

धाईने कहा—मत मत ऐसा कह। यह गेंड़ा गायोंका चारा होगा। गंडेरियाँ कल भी परिजन खायेगा। तेरा क्या बुरा होगा ?'

फिर मूलदेवके पास दासी भेजी—'देवदत्ता गन्ना मांगती है।'

मूलदेवने मित्रोंसे कौड़ी (उधार) ली, लिये दो गन्ने, हटाया छिलका, चार अंगुल बड़ी गंडेरियाँ कीं, सुगंधित मटकन्नेमें रक्खा, दासीको मटकन्ना समर्पित किया। चली गई दासी। (उसने) मटकन्नेको देवदत्ताको समर्पित किया। वह संतुष्ट हो कर बोली—

'देख अम्मा, मूलदेवकी चतुराई, कौन ऐसा (है) ?']

जनपदः (देश) **इभ्यः** (धनिक) **दारकः** (लड़का) **विचक्षणः** (चतुर) **कामिनी** (स्त्री) **दयितः** (प्रिय) **वराटिका** (कौड़ी) **लब्धः** (पाई) **रक्ता** (अनुरक्त) **कामयते** (प्यार करती) **धात्री** (धाई) **आढ्यः** (समृद्ध, युक्त) **स्थविरः** (बूढ़ा) **विरूपः** (विना रूप का) **लावण्यं** (सुन्दरता) **जल्पति** (बोलता है) **हता असि** (मारी गई तू) **प्रेषिता** (भेजी) **इक्षुः** (गन्ना) **भक्षयितुं** (खाने को) **समूलशाखः** (मूल-शाखा-सहित) **अग्राणि** (गन्नेका गेंडा) **चारः** (चारा) **गण्डकः** (गंडेरी) **परदिने** (अगले दिन) **परिजनः** (नौकर-चाकर) **यष्टिका** (दण्ड)

त्वक् (छाल) **अपनीता** (हटाई) **वासितः** (सुगन्धित) **शरावः** (मटकना, भरुका) **सम्पुटः** (बर्तन) **प्रेक्षस्व** (देख, आत्मनेपद)

विभक्तियोंके अर्थ और प्रयोग

१. प्रथमा विभक्ति

(१) सम्बोधनके लिये—**हे जिन** ।

(२) कर्ताके लिये—**जिनो गच्छति** (जिन जाता है, यहाँ जिन कर्ता है) ।

(३) कर्मकारक क्रियामें कर्मके लिये—**ग्रन्थः पठ्यते** (ग्रन्थ पढ़ा जाता है) ।

(४) कर्मकर्तृ क्रियामें कर्मके लिये—**घटः क्रियते स्वयमेव** (घड़ा स्वयं किया जाता है) ।

२. द्वितीया विभक्ति

(१) कर्तरि क्रियामें कर्मके लिये—**घटं करोति कुलालः** (कुम्हार धड़ा बनाता है) ।

(२) अनिच्छित कर्मके लिये—**ग्रामं गच्छन् तृणानि स्पृशति** (गाँव जाते तिनकेको छूता है, यहाँ तिनकेका छूना जानेवाले-के लिये कोई इच्छित काम नहीं है) ।

(३) अकर्मक धातुको प्रेरणावाली क्रियाके कर्ताके लिये—**यज्ञदत्तः देवदत्तं गमयति** (यज्ञदत्त देवदत्तको भेजता—गमन कराता है, यहाँ गमन क्रियाका असली कर्ता देवदत्त द्वितीया विभक्तिमें है) ।

(४) अन्तरा, अन्तरेण (बाद) के साथ द्वितीया–**अन्तरा त्वां न मे कोपि** (तेरे विना मेरा कोई नहीं), **अन्तरेण मां न कोपि गन्ता** (मेरे विना कोई नहीं जानेवाला) ।

(५) अनु (पीछे) के साथ–**रामं अनु गच्छामि** (रामके पीछे जाऊँगा) ।

(६) प्रति (लिये) के साथ–**अर्धं देवदत्तं प्रति अर्धं यज्ञदत्तं प्रति** (आधा देवदत्तके लिये, आधा यज्ञदत्तके लिये) ।

(७) परि (चारो ओर) के साथ–**ग्रामं परि नदी** (गाँवके चौगिर्द नदी) ।

(८) दूर और अन्तिक (समीप) के साथ–**दूरे ग्रामं** (गाँवसे दूर), **अन्तिके ग्रामं** (गाँवके समीप) ।

(९) काल और मार्ग वाची शब्दके साथ क्रियाके लगातार होने-पर–**मासं अधीते** (महीना भर पढ़ता), **वर्षं गच्छति** (वर्ष भर जाता है) **क्रोशं पर्वताः** (कोसों पहाड़), **क्रोशं नारिकेलिद्रुमाः** (कोसों नारियलके वृक्ष) ।

(१०) पृथक्, नाना आदि निपातोंके साथ–**ग्रामं पृथक्** (हर गाँव अलग) **पुरुषं नाना** (हर आदमी भिन्न) ।



त्रिंशः पाठः

तीर्थयात्राप्रसङ्गेन कावेरीतीरमागतोऽहं बालकं निधाय रुदतीं स्थविरां एकां विलोक्य अवदं—'स्थविरे, का त्वं ? अयं अर्भकः कस्य नयनानन्दकरः ? कान्तारं किमर्थं आगता ? शोककारणं किम् ?'

सा करयुगेन बाष्पजलं उन्मृज्य निजशोकशङ्कूत्पाटनक्षमं इव मां अवलोक्य शोकहेतुं अकथयत्—'द्विजात्मज, राजहंस-मन्त्रिणः सितवर्मणः कनीयान् आत्मजः सत्यवर्मा तीर्थयात्रा-मिषेण देशं एतं आगच्छत् । स कस्मिंश्चिद् अग्रहारे कालीं नाम कस्यचिद् भूसुरस्य नन्दिनीं विवाह्य तस्या अनपत्यतया गौरीं नाम तद्भगिनीं काञ्चनकान्तिं परिणीय तस्यां एकं तनयं अलभत । काली मातृष्वसाऽपि भवन्ती सपत्नीसुलभया असूयया एकदा धात्र्या मया सह बालं एतं एकेन मिषेण आनीय तटिन्यां एतस्यां अक्षिपत् । अहमपि तत्क्षणं निपत्य क्षणेन एकेन बालं उद्धृत्य अपरेण प्लवमाना नदीवेगागतस्य कस्यचित् तरोः शाखां अवलम्ब्य तत्र शिशुं निधाय नदीवेगेन उह्यमाना 'तरुलग्नेन' केनचित् कालभोगिना दष्टा । मदवलम्बीभूतो भूरुहोयं अस्मिन् देशे तीरं अगमत् । गरलप्रभावेण मयि मृतायां अरण्ये अनाथस्यास्य अर्भकस्य कश्चन शरण्यो नास्तीति अहं दूये' ।

ततः विषमविषज्वालाव्याप्तावयवा सा धरणीतले न्यपतत् । दयाविष्टहृदयोऽहं मन्त्रबलेन विषव्यथां अपनेतुं अक्षमः समीप-

कुञ्जेषु ओषधिविशेषं अन्विष्य प्रत्यागतो व्युत्क्रान्तजीवितां तां अपश्यम् । तदनु मया तस्याः पावकसंस्कारः विरचितः ।

(तीर्थयात्राके प्रसंगसे कावेरीके तीर आ बच्चेको आगे रख रोती एक बुढ़ियाको देख मैंने कहा—'बुढ़िया, तू कौन (है) ? यह बच्चा किसके नयनको आनन्द देनेवाला है ? बयाबानमें किस लिये आई ? (तेरे) शोकका कारण क्या (है) ?'

उसने दोनों हाथोंसे अश्रुजल पोंछ अपने शोकके कांटेको उखाड़नेमें समर्थ सा मुझे देख शोकका कारण कहा—'ब्राह्मणपुत्र, राजहंसके मंत्री सितवर्माका सबसे छोटा पुत्र सत्यवर्मा तीर्थयात्राके बहाने इस देशमें आया । उसने किसी अग्रहार (ब्राह्मण-ग्राम) में काली नामक ब्राह्मणकन्या ब्याह कर उसके निस्सन्तान होनेसे सोनेकी कान्तिवाली उसकी बहिन गौरीको ब्याह उससे एक पुत्र प्राप्त किया । कालीने मौसी होते भी सौतमें सुलभ ईर्ष्यासे एक बार मुझ धाईके साथ इस बालकको किसी बहानेसे ला कर नदीमें फेंक दिया । मैं भी उसी क्षण कूद कर एक हाथसे बालकको उठा दूसरेसे तैरती नदीके वेगमें आ गये किसी वृक्षकी शाखाका अवलम्ब ले उसपर बच्चेको रख नदीके प्रवाहसे बहती पेड़में चिपके कालसर्पसे डंसी गई । मेरा अवलम्बीभूत यह वृक्ष इस जगह तीरपर लगा । विषके प्रभावसे मेरे मर जानेपर जंगलमें इस अनाथ बच्चेका कोई शरण देनेवाला नहीं है, यह (सोच) दुखी हूँ ।'

तब भयङ्कर विषकी ज्वालासे व्याप्त अँगोंवाली वह जमीनपर गिर पड़ी । दयासे आवेशयुक्त हृदयवाला मैंने मंत्रबलसे विषकी पीड़ा हटानेमें असमर्थ पासके कुंजमें विशेष ओषधि ढूँढ कर लौटने-

पर मैंने उसे निर्जीव देखा। उसके बाद मैंने उसका दाहसंस्कार किया)।

अग्रे (आगे) निधाय (रखकर) रुदती (रोती) स्थविरा (बुढ़िया) अर्भकः (शिशु) कान्तारं (बयाबान, निर्जन) वाष्प-जलं (आंसूका पानी) उन्मृज्य (पोंछ कर) शङ्कुः (कांटा) उत्पाटनं (उखाड़ना) द्विजात्मज (ब्राह्मणका पुत्र) कनीयान् (सबसे छोटा) आत्मजः (पुत्र) मिषः (बहाना) अग्रहारः (कुलीन ब्राह्मणोंका गाँव) भूसुरः (ब्राह्मण) नन्दिनी (पुत्री) विवाह्य (विवाह कर) अनपत्यता (निस्सन्तानता) काञ्चन-कान्तिः (जिसकी कांति सोने सी हो) परिणीय (ब्याह कर) तनयः (पुत्र) अलभत (लाभ किया) मातृष्वसा (मौसी) भवन्ती (होती) सपत्नीसुलभा (सौतोंमें सुलभ) असूया (ईर्ष्या) तटिनी (नदी) अक्षिपत् (फेंक दिया) निपत्य (कूद कर) करः (हाथ) उद्धृत्य (उठा कर) प्लवमाना (तैरती) तरुः (पेड़) लग्नः (चिपका) कालभोगी (कालसर्प) दष्टा (डँसी गई) अवलम्बीभूतः (अवलम्ब हुआ) भूरुहः (वृक्ष) गरलप्रभावः (विषका प्रभाव) शरण्यः (शरण देनेवाला) दूये (दुखी हूँ, दूयतेका उत्तमपुरुष एकवचन)।

३. तृतीया विभक्ति

(१) कर्तरि क्रियामें करणके लिये—असिना कृन्तति (तलवार से काटता है), यहाँ असि काटनेका (साधकतम) करण है।

(२) भाव और कर्मवाची क्रियामें कर्ताके लिये—शठेन भूयते (शठ हुआ जाता है), रामेण पठ्यते (राम द्वारा पढ़ा जाता है, राम पढ़ता है का भावमें)।

(३) सकर्मक धातुके प्रेरणात्मक रूपके कर्ताके लिये—**रामः श्यामेन कटं कारयति** (राम श्याम द्वारा चटाई बनवाता है)।

(४) सह (साथ) के अर्थवाले पदोंके साथ—**मात्रा सह** (माता के साथ), **पुत्रेण साकं** (पुत्रके साथ), **गुरुणा सह** (गुरुके साथ)।

(५) तुल्य या उसके पर्यायोंके साथ आनेवाले पदके लिये—**पित्रा तुल्यः** (पिताके तुल्य), **पर्वतेन समः** (पहाड़के समान)।

(६) जिस अङ्गमें विकार हो, उसके लिये—**अक्ष्णा काणः** (आंख से काना), **पादेन खञ्जः** (पैरसे लंगड़ा), **कर्णेन बधिरः** (कानसे बहरा)।

(७) जिसके अर्थ क्रिया, उसके लिये—**पठनेन अत्र वसति** (पढ़ने के लिये यहाँ रहता है)।

(८) क्रय—विक्रयके मूल्यकी संख्याके लिये—**शतेन क्रीतं भूषणं** (सौसे खरीदा जेवर), **सहस्रेण क्रीतः अश्वः** (हज़ारसे खरीदा घोड़ा)।

(९) पृथक्, नाना, विना आदिके साथ आये पदके लिये—**ग्रामेण पृथक्** (गांवसे अलग), **स्वाभावेन नाना** (स्वभावसे भिन्न), **तेन विना** (उसके विना)।

(१०) स्तोक (थोड़ा), अल्प, कृच्छ्र (मुश्किल) आदिके साथ-**स्तोकेन मुक्तः** (थोड़ेसे छूट गया), **अल्पेन क्रीतः** (थोड़े से खरीदा), **कृच्छ्रेण लब्धः** (मुश्किलसे मिला), **प्रायेण अलसः** (प्रायः आलसी)।

(११) दूर, अन्तिक (नजदीक) के साथ—**ग्रामस्य दूरेण नदी** (गांवके दूर नदी), **राजधान्या अन्तिकेन यमुना** (राजधानीके समीप जमुना)।

(१२) हेतु शब्द के साथ सर्वनामोंके लिये—**केन हेतुना न आगतः** (किस कारण नहीं आया),।

(१३) तव्य, ईय आदि कृदन्त प्रत्ययोंके कर्ता के लिये—**मया पठितव्यं** (मुझे पढ़ना है), **तेन गन्तव्यं** (उसे जाना है), **त्वया देयं** (तुझे देना है)।

परस्मैपदी भू (होना) धातुका प्राचीन भूतकाल (लिट्) में रूप—

प्रथम पुरुष	बभूव	बभूवतुः	बभूवुः
मध्यम ,,	बभूविथ	बभूवथुः	बभूव
उत्तम ,,	बभूव	बभूविव	बभूविम

आत्मनेपदी कृ (करना) धातुका लिट्में रूप—

प्रथम पुरुष	चक्रे	चक्राते	चक्रिरे
मध्यम ,,	चकृषे	चक्राथे	चकृढ्वे
उत्तम ,,	चक्रे	चकृवहे	चकृमहे



एकत्रिंशः पाठ

नन्दं, विदित्वा सुगतः ततस्तं भार्याभिधाने तमसि भ्रमन्तम् ।
पाणौ गृहीत्वा वियद् उत्पपात मलं जले साधुरिवोज्जिहीर्षुः ॥३॥
तौ देवादारूत्तमगन्धवन्तं नदीसरः प्रस्रवणौघवन्तम् ।
आजग्मतुः कांचनधातुमन्तं देवर्षिमन्तं हिमवन्तमाशु ॥ ५ ॥
शान्तेन्द्रिये तत्र मुनौ स्थिते तु सविस्मयं दिक्षु ददर्श नन्दः ।
दरींश्च कुंजांश्च वनौकसश्च विभूषणं रक्षणमेव चाद्रेः ॥ ७ ॥
चलत्कदम्बे हिमवन्नितम्बे तरौ प्रलम्बे चमरो ललम्बे ।
छेत्तुं विलग्नं न शशाक बालं कुलोद्गतां प्रीतिमिवार्यवृत्तः ॥११॥
सुवर्णगौराश्च किरातसंघा मयूरपत्रोज्ज्वलगात्रलेखाः ।
शार्दूलपातप्रतिमा गुहाभ्यो निष्पेतुरुद्गार इवाचलस्य ॥ १२ ॥
दरीचराणामतिसुंदरीणां मनोहरश्रोणिकुचोदरीणाम् ।
वृन्दानि रेजुर्दिशि किन्नरीणां पुष्पोत्कचानामिव वल्लरीणाम् १३
नगान्नगस्योपरि देवदारून् आयासयन्तः कपयो विचेरुः ।
तेभ्यः फलं नापुरतोऽपजग्मुर्मोघप्रसादेभ्य इवेश्वरस्य ॥ १४ ॥
ऋतावृताकृतिमेक एके क्षणे क्षणे बिभ्रति यत्र वृक्षाः ।
चित्रां समस्तामपि केचिदन्ये षण्णामृतूनां श्रियमुद्वहन्ति ॥१६॥
रक्तानि फुल्लाः कमलानि यत्र प्रदीपवृक्षा इव भान्ति वृक्षाः ।
प्रफुल्लनीलोत्पलरोहिणोऽन्ये सोन्मीलिताक्षा इव भान्ति वृक्षाः २१

(सौन्दरानन्द, दशमः सर्गः ।)

[भार्यारूपी अन्धकारमें भूले नन्दको जान कर तब सुगत

(बुद्ध) उसे हाथसे पकड़, अच्छी तरह जलसे मलको हटाते जैसे आकाशमें उठे ॥ ३ ॥

वे दोनों (नन्द और बुद्ध) देवदारुके उत्तम गंधवाले, नदी–सरोवर–चश्मेके समूहवाले, सोनाधातुवाले, देवर्षियोंसे युक्त हिमालयमें तुरन्त आये ॥ ५ ॥

वहाँ मुनि (बुद्ध) के शान्त–इन्द्रिय रहते समय नन्दने आश्चर्यके साथ दिशाओंको पर्वतके विभूषण रक्षण (की तरह) गुहाओं, कुंजों और वनवासियोंको देखा ॥ ७ ॥

हिमालयके कटिप्रदेशके चंचल समूह लम्बे वृक्षमें चमर लटका हुआ था । उत्तम आचारी जैसे कुलक्रमागत प्रीतिको वैसे ही चिपके हुये पोंछको (वह) नहीं तोड़ सका ॥ ११ ॥

सोने जैसे गोरे मोरपंखसे चमकते शरीराकारवाले शार्दूलके आ पड़ने जैसे किरातोंके समूह पहाड़के उद्गार (उगाल) के जैसे गुहाओंसे निकले ॥ १२ ॥

पुष्पोंसे फूली लताओं सी गुहाचारिणी, अतिसुंदरी, मनोहरजंघा-उदर-स्तनवाली किन्नरियोंका समूह (हर) दिशामें शोभित हो रहा था ॥ १३ ॥

देवदारोंको तकलीफ देते वानर एक पहाड़से दूसरे पहाड़ पर विचर रहे थे । उन (देवदारों) से फल नहीं पाये, इस लिये व्यर्थ प्रसन्नतावाले राजाको जैसे (उन्हें) छोड़ गये ॥ १४ ॥

जहाँ ऋतु–ऋतु एक–एक क्षण वृक्ष (नाना) आकृति धारण करते हैं ।

कोई—कोई (वृक्ष) छओ ऋतुओंकी समस्त विचित्र शोभाको धारण करते हैं ॥ १६ ॥

जहाँ लाल कमल (वाले) फूले वृक्ष दीपवृक्ष (फानूस) से दीख पड़ते हैं। फूले नील कमल उगानेवाले दूसरे वृक्ष खुली आंखोंवाले से भासित होते हैं ॥ २१ ॥]

अभिधानं (नामधारी) **तमः** (अंधार) **वियद्** (आकाश) **उत्पपात** (उठे, लिट् प्रथम० १ वचन) **उज्जिहीर्षुः** (हरण करने के इच्छुक) **प्रस्रवणं** (जलपात, चश्मा) **ओघः** (समूह) **आजग्मतुः** (आये, लिट्, १, २), **आशु** (जल्दी) **सविस्मयं** (आश्चर्यसहित) **ददर्श** (देखा, लिट् १, १) **दरिः** (गुहा) **वनौका** (वनमें घरवाला) **अद्रिः** (पहाड़) **कदम्बः** (समूह, एक वृक्ष) **नितम्बः** (कटिप्रदेश) **प्रलम्बः** (बहुत लंबा) **चमरः** (याक पशु) **ललम्बे** (लम्बित हुआ, लिट् १, १) **विलग्नं** (उलझा) **शशाक** (सका, लिट् १, १) **कुलोद्गता** (कुलसे आई) **आर्यः** (उत्तम) **वृत्तं** (आचार) **किराताः** (हिमालयके आदिवासी) **उज्ज्वलं** (उजला, चमकता) **गात्रं** (शरीर) **लेखा** (आकारः) **शार्दूलपातः** (शार्दूलका आ पड़ना) **प्रतिमः** (सदृशः) **निष्पेतुः** (आ पड़े, लिट् १, ३) **उद्गारः** (उगाल) **अचलः** (पहाड़) **दरीचरः** (गुहावासी) **श्रोणिः** (जंघा) **कुचः** (स्तन) **वृन्दं** (समूह) **रेजुः** (शोभित हुये, लिट् १, ३) **उत्कचं** (फूला) **वल्लरिः** (लता) **नगः** (पहाड़) **देवदारुः** (देवदारवृक्ष) **कपिः** (वानर) **विचेरुः** (विचरे, लिट् १, ३) **आपुः** (पाये, लिट् १, ३) **अपजग्मुः** (हट गये, लिट् १, ३) **मोघः** (व्यर्थ) **प्रसादः** (प्रसन्नता, कृपा) **ईश्वर** (स्वामी,

राजा) **बिभ्रति** (धारण करते है) **समस्तं** (सब) **नीलोत्पलं** (नीलकमल) **रोहिणः** (उगनेवाले) **उन्मीलिताक्षं** (खुली आँख) **भान्ति** (दीखते, भासित होते हैं) **प्रदीपवृक्षः** (दियेके झाड़)

४. चतुर्थी विभक्ति

(१) कर्तृकारक क्रियामें संप्रदान कारक के लिये—**अतिथये भोजनं यच्छति** (अतिथिको भोजन देता है ।

(२) रुचता जिसे, उसकेलिये—**राज्ञे रोचते** (राजाको रुचता है) ।

(३) प्रशंसार्थ धातुसे उसके पात्र के लिये—**बुद्धाय श्लाघते** (बुद्धकी प्रशंसा करता है) ।

(४) धारणार्थ धातुके साथ—**देवदत्ताय शतं धारयामि** (देवदत्त-का सौ धारण करता हूँ)

(५) क्रोध, द्रोह, ईर्ष्या आदिके योग में—**बालकाय क्रुध्यति, द्रुह्यति, ईर्ष्यति** (लड़के पर क्रोध करता०) ।

(६) क्रय-विक्रयके योग में—**शताय क्रीतं पुस्तकं, सहस्राय विक्रीतं** (सौमें खरीदी, हजारमें बेंची पुस्तक) ।

(७) आशंसा (चाह) के लिये—**मंगलं तुभ्यं भवतु** (तेरा मंगल हो) ।

(८) नमः आदिके योग में—**नमो बुद्धाय, स्वस्ति जनेभ्यः, स्वाहा अग्नये** (बुद्धके लिये नमः, लोगोंका कल्याण हो, अग्निको स्वाहा) ।

(९) उसके लिये—**रथाय दारु** (रथके लिये काठ), **युद्धाय सज्जः** (युद्धकेलिये तैयार), **पाकाय गच्छति** (पकानेके लिये जाता है) ।

(१०) गमन आदि धातुके कर्मकेलिये–**ग्रामाय गच्छति** (गाँव जाता है), **वनाय प्रस्थितः** (वनके लिये प्रस्थान किया)।



द्वात्रिंशः पाठः

यावद् विटपान्तरेण अवलोकयामि। (परिक्रम्य तथा कृत्वा, सहर्षं) **अये लब्धं नेत्रनिर्वाणम्। एषा मे मनोरथप्रियतमा कुसुमास्तरणं शिलापट्टं अधिशयाना सखीभ्यां सेविता तिष्ठति। भवतु, श्रोष्यामि एतासां विस्रम्भकथितानि।** (विलोकयन् स्थितः)।

(ततः प्रविशति सह सखीभ्यां शकुन्तला)।

सख्यौ—(उपवीज्य, सस्नेहं) **अयि शकुन्तले, अपि सुखयति ते नलिनीपत्रवातः?**

शकुन्तला—(सखेदं) **किं वीजयतः सख्यौ माम्।**

सख्यौ—(विषादं नाटयित्वा परस्परं अवलोकयतः)।

राजा—(आत्मगतं) **बलवद् अस्वस्थशरीरा शकुन्तला।** (सवितर्कं) **तत् किम् अयं आतपदोषः, उत यथा मे मनसि।** (साभिलाषं निर्वर्ण्य) **अथवा कृतं सन्देहेन।**

प्रियंवदा—(जनान्तिकं) **अनुसूये, तस्य राजर्षेः प्रथमदर्शनाद् आरभ्य पर्युत्सुका इव शकुन्तला। किं नु खलु तन्निमित्तोऽयं आतंकः।**

अनुसूया—सखि, ममापि ईदृशी आशंका। भवतु, पृच्छामि, तावद् एताम्। (प्रकाशं) सखि, प्रष्टव्यासि किमपि। बलवान् खलु ते संतापः।

शकुन्तला—(पूर्वार्धेन शयनाद् उत्थाप्य शरीरं) अयि, किं वक्तुकामाऽसि?

अनुसूया—अयि शकुन्तले, अनुभवहीने आवां मदनसंबंधिनो वृत्तान्तस्य, किन्तु यादृशी इतिहासनिबन्धेषु कामयमानानां अवस्था श्रुता, तादृशीं तव पश्यामि। कथय, किंनिमित्तं ते संतापः? कारणं खलु परमार्थतः अज्ञात्वा न साध्यः प्रतीकारः।

शकुन्तला—(आत्मगतं) बलवान् खलु मे अभिनिवेशः। इदानीमपि सहसा एतयोर्न शक्नोमि निवेदयितुम्।

प्रियंवदा—सखि शकुन्तले, सुष्ठु एषा भणति। किं आत्मनः आतंकं उपेक्षसे? अनुदिवसं खलु परिहीयसे अंगैः, केवलं लावण्यमयी छाया त्वां न मुंचति।

राजा—अवितथं वदति प्रियंवदा।

शकुन्तला—सखि, कस्य वाऽन्यस्य कथयिष्यामि, आयासयित्री वा भविष्यामि?

उभे—अत एव खलु आवयोः निर्बन्धः। स्निग्धजनेषु संविभक्तं हि दुःखं सह्यवेदनं भवति।

शकुन्तला—सखि, यतः प्रभृति मम दर्शनपथं आगतः स तपोवनरक्षिता राजर्षिः, तत आरभ्य तद्गतेन अभिलाषेण एतदवस्थां अस्मि संवृत्ता। (अभिज्ञानशाकुन्तल अंक ३)

[तो पेड़की आड़में हो देखता हूँ। (घूम के वैसा करके) अरे, नेत्रका परमसुख मिल गया। यह मेरे मनोरथकी प्रियतमा फूलबिछे शिलापटपर लेटी दो सखियों द्वारा सेविता स्थित है। अच्छा, सुनूँगा इनके रहस्य-कथनको।

(तब दो सखियों सहित शकुन्तला रंगमें प्रवेश करती है।)

दोनों सखियाँ—(पंखा झेल कर स्नेहके साथ) री शकुन्तले, क्या कमलिनी पत्रके पंखेकी यह हवा अच्छी लगती है ?

शकुन्तला—(खेद-सहित) क्यों झलती हो मुझे सखियो ?

(सखियाँ विषाद का अभिनय करती एक दूसरेको देखती हैं।)

राजा—(अपने आपसे) शरीरसे (है) अत्यन्त अस्वस्थ शकुन्तला। (वितर्क करते) तो क्या यह आतपका दोष है, या जैसा कि मेरे मनमें (है वही है)। (लालसाके साथ अच्छी तरह देख कर) अथवा सन्देह बेकार (है)।

प्रियंवदा—(अपने मन में) अनुसूया, उस राजर्षिके प्रथम दर्शन से ही शकुन्तला अति उत्सुक सी है, क्या उसीके कारण यह कष्ट (तो) नहीं ?

अनुसूया—सखी, मेरी भी ऐसी (ही) आशंका (है)। अच्छा, तो इससे पूछती हूँ। (प्रकट में) सखी, तुझसे कुछ पूछना है। तुझे जबर्दस्त संताप है।

शकुन्तला—(ऊपरी आधे शरीरको शय्यासे उठा कर) री, क्या कहना चाहती हो ?

अनुसूया—री शकुन्तला, हम दोनों काम-संबन्धी वृत्तान्तमें अनुभवहीन हैं, किन्तु इतिहासके निबन्धोंमें काम-पीड़ितोंकी जैसी अवस्था सुनी, वैसी तेरी देख रही हूँ। कह, किस कारण तुझे (यह) संताप (है)? कारण को पूरी तौरसे जाने विना प्रतीकार नहीं हो सकता।

शकुन्तला—(अपने आपसे) मेरा जबर्दस्त आग्रह है। अब भी सहसा इनको नहीं बतला सकती।

प्रियंवदा—सखी शकुन्तला, यह ठीक कहती है। क्यों अपनी व्याधिकी उपेक्षा करती है? रोज-रोज तेरे अंग क्षीण होते जा रहे हैं, केवल (तेरी) लावण्यमयी छाया तुझे नहीं छोड़ रही है।

राजा—ठीक कहती है प्रियंवदा।

शकुन्तला—दूसरे किसको कहूँ या दुःख देनेवाली होऊँगी?

दोनों—इसीलिये हम दोनोंका (जाननेका) आग्रह है। स्नेही जनोंमें अच्छी तरह बटा दुःख भुगतनेमें सह्य होता है।

शकुन्तला—सखी, जबसे मेरी आंखोंके सामने वह तपोवनरक्षक राजर्षि आया, तबसे ही उसके विषयमें अभिलाषासे मैं इस अवस्थावाली हुई।]

(५) पंचमी विभक्ति

(१) अपादानमें—**वृक्षात् पत्रं पतति** (वृक्षसे पत्ता गिरता है, वृक्ष अपादान है।)

(२) अप, परिके योगमें—**अप कोलम्बं वृष्टो देवः** (कोलबो छोड़ देवने वर्षा की)। **परि रोहणेभ्यः वर्षा नास्ति** (रोहणदेशको छोड़ वर्षा नहीं है।)

(३) सीमासूचक आ के योगमें—**आ पुलस्त्यपुराद् वनं** (पोलन्नारुवतक वन है।)

(४) विनिमय अर्थवाले प्रतिके योगमें—**तिलेभ्यः प्रति यच्छामि माषान्** (तिलोंके बदले उड़द देता हूँ।)

(५) ऋणवाली संख्याके योगमें—**शताद् बद्धः** (सौके ऋणसे बँधा।)

(६) पृथक्, विना, नाना इत्यादिके योगमें—**नगरात् पृथक्, विना, नाना** (नगरसे अलग, विना, नाना), **ज्ञानाद् ऋते** (ज्ञानके विना।)

(७) करण अर्थवाले स्तोक, अल्प, कृच्छ्र, कतिपयके योगमें—**स्तोकात् मुक्तः** (थोड़ेसे छूटा), **कृच्छ्रात् प्राप्तं गृहं** (मुश्किलसे घर पाया।)

(८) निर्धारणमें—**कोलम्बकाः काण्डिकेभ्य आढ्यतराः** (कोलम्बो निवासी कांडीवालोंसे अधिक धनी हैं।), **समुद्रात् पोतः भिन्नः** (समुद्रसे जहाज भिन्न है।)

(९) दूर शब्दके साथ—**नगराद् दूरं, दूरे, राद्‌दू** (नगरसे दूर)।

(१०) समीपता अर्थवाले शब्दके साथ—**नगराद् अन्तिकं, अन्तिकाद्** (नगरके पास ।)

(११) प्राक्के योग में—**प्राग् ग्रामात्** (गाँवसे पहिले), **वृष्टेः प्राक्** (वर्षासे पहिले ।)



त्रयस्त्रिंशः पाठः

'सन्तुष्टो राजा युधिष्ठिरो यो हि असहत समीप एव किंपुरुषाणां राज्यम्, अलसः चण्डकोशो यो न प्राविशत् क्ष्मां जित्वा स्त्रीराज्यम्, ह्रसीय एव अन्तरं तुषारगिरि-गन्धमादनयोः। उत्साहिनः किष्कु-तुरुष्क-विषयाः। प्रादेशः पारसीकदेशः। शशपदं शकस्थानम्। अदृश्यमानप्रतिप्रहारे पारियात्रे यात्रैव शिथिला। शौर्यशुल्कः सुलभो दक्षिणापथः। अद्रेर्नेदीयान् मलयः। मलयलग्न एव च महेन्द्रः।' इत्येवंप्रायान् उद्योगद्योतकानाम् आलापानां पार्थिवकुमाराणां शृण्वन्नेव आससाद आवासम्।

अथ तत्र प्रतीहारः विज्ञापितवान्—'देव, प्राग्ज्योतिषेश्वरेण कुमारेण प्रहितो हंसवेगनामा दूतोऽन्तरंगः तोरणं अध्यास्ते' इति राजा तु 'तमाशु प्रवेशय' इति आदिदेश। अनन्तरं च हंसवेगः प्राभृतभृतां पुरुषाणां समूहेन अनुगम्यमानो विवेश राजमन्दिरम्। ततो राजा पप्रच्छ—'हंसवेग, कच्चित् कुशली श्रीमान् कुमारः ?'

स तं अन्ववदत्–'अद्य कुशली येन एवं स्नेहस्नपितया गिरा पृच्छति देवः।'

—(हर्षचरितं, उच्छ्वासः ७)

['राजा युधिष्ठिर सन्तुष्ट हो गये, जो कि समीपमें किंपुरुषों (किन्नरों) के राज्य को सहन किया। चंडकोश आलसी था, जो उसने पृथिवी जीत कर भी स्त्रीराज्यमें प्रवेश नहीं किया। बहुत थोड़ासा ही अन्तर है हिमगिरि और गन्धमादनमें। उत्साह-वालोंका है किष्कु और तुरुष्कदेश। बित्ता (भर है) पारसदेश। खरगोशके पैर के बराबर है सीस्तान। जहाँ विरोधमें प्रहार नहीं दीखता, उस पारियात्रमें यात्रा ही शिथिल है। शूरता जिसका मूल्य है, वह दक्षिणापथ प्राप्त करनेमें आसान है। दर्दुर पहाड़के नजदीकमें मलय है। मलयसे सटा हुआ ही महेन्द्र है।' प्रायः इसी तरहके राजकुमारोंके साहस प्रकाशक आलापोंको सुनते (राजा) निवासस्थानमें पहुँचा।

[तब वहाँ प्रतीहार (अंगरक्षक) ने अर्ज की–'देव, असमके स्वामी कुमार द्वारा प्रेषित हंसवेग नामक अन्तरंग दूत फाटकपर है'। राजाने आदेश दिया–'उसे जल्दी प्रवेश कराओ।' फिर हंसवेगने बहुत भेंट ढोनेवाले पुरुषोंको पीछे किये राजमंदिरमें प्रवेश किया। तब राजाने पूछा–'हंसवेग, श्रीमान् कुमार कुशली तो हैं ?' उसने जवाब दिया–'आज कुशली हैं, जो कि ऐसी स्नेहमें नहाई वाणीसे महाराज पूछ रहे हैं।']

[**असहत** (सहन किया, भूत १।१) **अलसः** (आलसी) **प्राविशत्** (प्रवेश किया) **क्ष्मा** (पृथिवी) **ह्रसीयः** (अत्यंत ह्रस्व,

छोटा) **तुषारगिरिः** (हिमाचल) **उत्साही** (साहसवाला) **आदेशः** (चित्ता) **पारसीकदेशः** (ईरान) **शशपदं** (खरगोशका पैर) **शकस्थानं** (सीस्तान) **अदृश्यमानः** (न दीखता) **प्रति-प्रहारः** (विरोधमें प्रहार) **शौर्यशुल्कः** (शूरता है मूल्य जिसका) **नेदीयान्** (अतिसमीप) **लग्नः** (लगा) **उद्योगद्योतकः** (साहस प्रकाशक) **आससाद** (आ पहुँचा) **प्रहितः** (भेजा हुआ) **अन्त-रंगः** (भीतरी, घनिष्ठ) **तोरणं** (सिंह-द्वार) **आदिदेश** (आदेश दिया, लिट् १।१) **आशु** (शीघ्र) **प्रभूतं** (बहुत) **प्राभृतं** (भेंट) **भृत्** (धारक) **अनुगम्यमानः** (अनुगमन किया जाता) **कच्चित्** (क्या) **कुशली** (सकुशल) **अन्ववदत्** (अनुकथन किया, उत्तर दिया) **स्नेहस्नपिता** (स्नेहसे नहलाई)।

६. षष्ठी विभक्ति

(१) तुल्य और उसके पर्याय शब्दोंके योगमें—**तस्य तुल्यः** (उसके समान), **तस्य सदृशः** (उसके जैसा), **तस्य समानः** (उसके समान)

(२) संबन्धके अर्थमें—**राज्ञः अश्वः** (राजाका घोड़ा ।)

(३) हेतुके अर्थमें—**भोजनस्य हेतोः गच्छति** (भोजनके लिये जाता है), **कस्य कारणाद् नागतः** (किस कारणसे नहीं आया ।)

(४) दूर, अन्तिकके साथ—**नगरस्य दूरं** (नगरसे दूर), **राजगृहस्य अन्तिकं** (राजगृहके पास ।)

(५) कृति, कर्ता आदिके योगमें—**सांकृत्यायनस्य कृतिः** (सांकृत्यायनकी रचना), **अस्य ग्रन्थस्य कर्ता सांकृत्यायनः** (इस ग्रन्थका कर्ता सांकृत्यायन ।)

(६) तव्य, ईय आदिके साथ—**सर्वेषां सेवनीयं औषधं** (सबका सेवनीय औषध), **सर्वेषां आश्रयितव्यः मार्गः** (सबका आश्रयणीय मार्ग ।)

(७) आयुष्य, भद्र, कुशल, हित, सुख आदिके साथ आशीर्वाद आदिमें—**आयुष्यं ते भूयाद्** (तेरी उमर (बड़ी) हो), **भद्रं ते भूयात्** (तेरा मंगल हो), **सुखं सर्वेषां भूयाद्** (सबको सुख हो ।)

(८) प्रतिभू, प्रसूत, साक्षी, कुशल, स्वामी आदिके योगमें—**गृहस्य स्वामी** (घरका मालिक), **धर्मस्य दायादः** (धर्मका उत्तराधिकारी), **कः तव प्रतिभूः** (कौन तेरा जामिन), **भरतस्य प्रसूतिः** (भरतकी सन्तान), **तर्कस्य कुशलः** (तर्कमें चतुर ।)

(९) निर्धारणके लिये—**छात्राणां ज्येष्ठो रामः अलसः** (विद्यार्थियोंमें ज्येष्ठ राम आलसी है), **नराणां नापितो धूर्तः** (नरोंमें नाई धूर्त ।)

(१०) अनादरके लिये—**रुदितः प्रव्रजितः** (रोते हुये साधु बना ।)

(११) कृत्व प्रत्ययके साथ—**पंचकृत्वः दिनस्य खादति** (दिनमें पाँच बार खाता है), **द्विः दिनस्य पठति** (दिनमें दो बार पढ़ता है ।)

भू (होना) धातुका रूप आशीः (लिङ्) में

प्रथम पुरुष	भूयात्	भूयास्ताम्	भूयासुः
मध्यम ,,	भूयाः	भूयास्तम्	भूयास्त
उत्तम ,,	भूयासम्	भूयास्व	भूयास्म

भूयात् (होवे ।)



चतुस्त्रिंशः पाठः

वयं भारतस्य जनाः, भारतं संपूर्णप्रभुत्वसंपन्नं लोकतंत्रात्मकं गणराज्यं विधातुम् , तस्याखिलनागरिकांश्च—

सामाजिकं आर्थिकं राजनीतिकं च न्यायम् ,

विचारस्याभिव्यक्तेः श्रद्धाया धर्मस्य पूजानुष्ठानस्य च स्वतंत्रताम् ,

प्रतिष्ठाया अवसरस्य च समताम् ,

प्रापयितुं,

तेषु च सर्वेषु ।

व्यक्तिगौरवस्य च समाश्वसयित्रीं भ्रातृभावनां वर्धयितुम् , कृतदृढसंकल्पा अस्यां अस्मदीयायां संविधानसभायां अद्य खिस्तीये १९४९–तमे वत्सरे नवम्बरमासस्य २६–तमे

दिवसे (२००६–तमे विक्रमसंवत्सरे मार्गशीर्षे शुक्लपक्षे सप्तम्यां तिथौ) एतेन इदं संविधानं स्वीकुर्महेऽधिनियमयामहेऽस्मभ्यं च समर्पयामहे। —(भारतसंविधानम्)

[हम भारतके लोग भारतको संपूर्णप्रभुत्वसंपन्न लोकतंत्रात्मक राज्य बनानेको और उसके अखिल नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक, और राजनीतिक न्यायको दिलवानेको,

उनमें सबमें,

और व्यक्ति गौरवका समाश्वासन देनेवाली भ्रातृभावना बढ़ानेको

दृढ़संकल्प हो इस हमारी संविधान सभामें आज ईसवी १९४९ सन् नवम्बर मासकी २६ तारीख (मार्ग शीर्ष शुक्ल सप्तमी २००६ विक्रमसंवत्सर) को इससे इस संविधानको स्वीकार कर रहे, अधिनियमित कर रहे अपने को समर्पित कर रहे हैं।]

[**संपूर्णप्रभुत्वसंपन्नं** (सारी प्रभुतासे युक्त) **लोकतन्त्रात्मकं** (जनताके आधिपत्यवाला) **गणराज्यं** (राजा नहीं जनगणका राज्य) **विधातुं** (करनेको) **अखिलं** (सब) **अभिव्यक्तिः** (प्रकटन) **प्रतिष्ठा** (सम्मान) **प्रापयितुं** (प्राप्त करानेको) **समाश्वासयित्री** (गारंटी करनेवाली) **कृतदृढसंकल्पः** (दृढ़ संकल्प किये) **एतेन** (इस के द्वारा) **स्वीकुर्महे** (हम स्वीकार करते हैं) **अधिनियमयामहे** (अधिनियमित करते हैं, अनिवार्य नियमका रूप देते हैं)।]

(७) सप्तमी विभक्ति

(१) आधारके लिये—**कटे निषीदति** (चटाई पर बैठता है), **गृहे वसति** (घरमें बसता है)।

(२) साधु (अच्छा) के योगमें—**शयने साधुः माणवकः** (सोनेमें अच्छा है माणवक ।)

(३) जिस क्रियापर दूसरी क्रिया निर्भर है, उसके लिये—**अस्तंगते सूर्ये गच्छामः** (सूर्यके डूबने पर हम जायेंगे ।)

(४) स्वामी-अर्थवाले तथा प्रसूत आदिके योगमें—**कोलम्बे ईश्वरः** (कोलम्बो का स्वामी), **रोहणे अधिपतिः** (रोहण प्रदेशका अधिपति), **गर्गेषु प्रसूतः** (गर्गवंश में उत्पन्न), **कुलेषु दायादः, साक्षी, प्रतिभूः** (कुलोंका उत्तराधिकारी)।

(५) निर्धारणके लिये—(क) **खगेषु वायसो धूर्तः** (पक्षियोंमें कौआ धूर्त), यहाँ जाति है ।

(ख) गुणनिर्धारण—**धर्मेषु सत्यं श्रेष्ठम्** (धर्मोंमें सत्य श्रेष्ठ है ।)

(ग) क्रियानिर्धारण—**यात्रिषु वैमानिकाः शीघ्रतमाः** (यात्रियोंमें विमानवाले) बहुत तेज हैं ।

(घ) नामनिर्धारण—**छात्रेषु तिष्यः अलसः** (विद्यार्थियोंमें तिष्य आलसी है ।)

इति सांकृत्यायनीयायां संस्कृतपाठमालायां द्वितीयं पुस्तकं समाप्तम् ।



संस्कृत पाठमाला

(१—५ भाग)

लेखक—

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन

स्वतंत्र भारत के हरएक बालक और बालिका को संस्कृत का ज्ञान होना परमावश्यक है। बिना इसके राष्ट्रभाषा हिन्दी पर पूरा अधिकार हो ही नहीं सकता। इसी लिये संस्कृत को सुगमता से सीखने के लिये सांकृत्यायन जी ने इस पुस्तक को पाँच भागों में बाँट कर बहुत ही सरल ढंग से लिखा है। पाँचों भागों के पढ़ जाने से संस्कृत भाषा तथा छन्द और अलंकार का इतना ज्ञान हो जायगा कि आप रामायण, महाभारत ही नहीं कालिदास आदि महान् कवियों की कृतियों का रस भी मूल भाषा में ले सकते हैं।

प्राप्तिस्थान—

चौखम्बा विद्या भवन,

चौक, बनारस-१